ग्रामीण विकास
को समर्पित

कुरुक्षेत्र

वर्ष 58 अंक : 08 | जून 2012 | मूल्य : ₹ 10

पर्यावरण और ग्रामीण मुद्दे

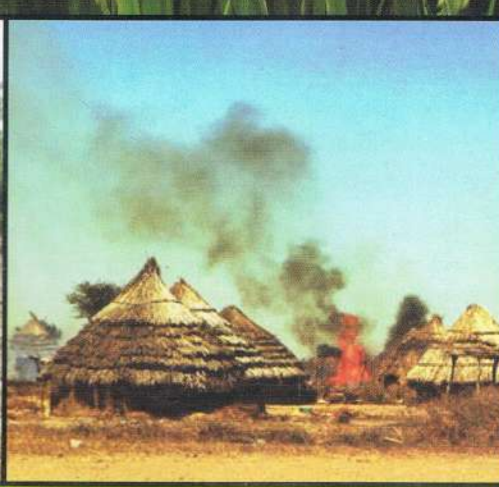

वेल्लयानी झील के संरक्षण के प्रयास

वेल्लयानी झील केरल की वर्षापोषित ताजे जल वाली तीन झीलों में से एक है, जिसे वेल्लयानी कायल के नाम से भी पुकारा जाता है। यह रमणीय झील चारों तरफ हरियाली से घिरी है और तिरुवनंतपुरम शहर से लगभग नौ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। वेल्लयानी झील विभिन्न प्रकार के पेड़–पौधों और पशुओं का आवास है और जैव विविधता इस झील के आसपास के लोगों की आजीविका में मदद करती है। प्रवासी पक्षियों समेत आर्द्र भूमि की लगभग सौ प्रजाति के पक्षी इस झील पर आते रहते हैं।

इस झील की उत्पत्ति के संबंध में एक स्थानीय कहानी मशहूर है कि एक संत इस स्थान पर एक बरगद के पेड़ के नीचे ध्यान लगाया करते थे। एक दिन उनके पास एक भिखारी आया और उनसे पीने के लिए थोड़ा पानी मांगा। संत ने देखा कि उनका घड़ा लगभग खाली था, उन्होंने घड़े में बची कुछ बूंदों को अपनी हथेली पर डाला और प्रार्थना करते हुए पानी की बूंदों को दूर तक फेंक दिया। जमीन के जिस हिस्से तक बूंदों ने धरती को छुआ था, वहां एक बड़ी झील बन गई। इस झील के तट पर विष्णु और देवी को समर्पित दो मंदिर स्थित हैं। ऐसा माना जाता है कि 1953 तक इस झील का प्रयोग सिर्फ विख्यात श्री पद्मनाभस्वामी मंदिर की पूजा में प्रयुक्त होने वाले कमल पुष्पों की सिंचाई के लिए ही किया जाता था। लेकिन बाद में इस झील के पानी का प्रयोग पेयजल के रूप में और सिंचाई के लिए भी बड़े पैमाने पर होने लगा।

ताजा जलयुक्त वेल्लयानी झील कल्लियूर, वेंगनूर, विझिंझम ग्राम पंचायतों के लोगों के लिए पेयजल का एक प्रमुख स्रोत है। लेकिन धान की खेती शुरू होने के कारण झील के पानी की गुणवत्ता में ह्रास हुआ है और जलप्रसार क्षेत्र में भी काफी कमी आई है। 1926 में इस झील का क्षेत्रफल 750 हेक्टेयर था जो 2005 में घटकर 397.5 हेक्टेयर हो गया। परिणामस्वरूप इस झील के आसपास स्थित गांवों को पानी की भारी कमी का सामना करना पड़ रहा है। 1950 के दशक के दौरान इस झील के पानी को रोककर चावल की खेती की एक परियोजना शुरू की गई थी जिसके परिणामस्वरूप झील क्षेत्र के आसपास बड़े पैमाने पर कृषि अभियान शुरू हुए और झील के क्षेत्रफल में कमी आई।

अध्ययन और अनुशंसाएं

केरल विधानसभा की पर्यावरण समिति ने ताजे जल वाली झीलों से जुड़े पर्यावरण संबंधी मुद्दों का अध्ययन किया और 1993 में एक रिपोर्ट सौंपी। इस समिति ने अनुशंसा की थी कि राज्य सरकार को इस झील के हड़पे गए हिस्से की पहचान करके सीमांकन करना चाहिए और अवैध कब्जा करने वालों को हटाने, झील के पानी को प्रदूषण से बचाने, झील के तल में जमी गंदगी को हटाकर उसकी गहराई बढ़ाने और झील में गाद के ओर जमाव को रोकने के लिए कदम उठाया जाना चाहिए।

कृषि महाविद्यालय, वेल्लयानी द्वारा किए गए एक अध्ययन की रिपोर्ट ने यह चेतावनी दी है कि खेती के लिए वेल्लयानी झील के जल को खत्म करने से इस जलाशय के लिए खतरा पैदा हो जाएगा और पड़ोसी पंचायतों को सेवा प्रदान करने वाली कई पेयजल परियोजनाओं के लिए संकट उत्पन्न हो जाएगा। 2005 में केरल राज्य मानव अधिकार आयोग अध्ययन रिपोर्ट ने इस जलाशय क्षेत्र का सीमांकन करने और हड़पे गए हिस्सों की पहचान करने के लिए एक राजस्व सर्वेक्षण कराने की सिफारिश की थी। वर्ष 2006 में केरल राज्य मानव अधिकार आयोग ने राज्य सरकार को वेल्लयानी झील से सटी जमीन पर धान की खेती से संबंधित आदेश को वापस लेने का निर्देश दिया था। इस आयोग ने राज्य सरकार को पेयजल के एक स्रोत के रूप में इस झील के संरक्षण के लिए कदम उठाने हेतु केंद्रीय पर्यावरण एवं वन मंत्रालय के साथ मिलकर कार्य करने का भी निर्देश दिया है।

संरक्षण के लिए पहल

वेल्लयानी झील के संरक्षण के लिए लोगों की मांग तब शुरू हुई जब 1990 के दशक के दौरान वेल्लयानी के आसपास के गांवों में पानी की कमी बढ़ गई। स्थानीय लोगों की मदद से कई गैर–सरकारी संगठनों द्वारा ताजे जल वाली वेल्लयानी झील और उसके परितंत्र को सुरक्षित करने के लिए कई भागीदारी अभियान चलाए जा रहे हैं। इस अनोखे परितंत्र के महत्व को समझते हुए राज्य सरकार ने वेल्लयानी झील के परितंत्र संबंधी सुरक्षा और सौंदर्यीकरण के लिए कदम उठाए हैं।

त्रिवेन्द्रम जिला पंचायत ने वेल्लयानी झील के परितंत्र की सुरक्षा के लिए इस झील को महात्मा गांधी राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम में शामिल करने की पहल की है। इस परियोजना के अंग के रूप में यह पंचायत बांधों को मजबूत बनाने और दलदल की सफाई इत्यादि के लिए कदम उठा रही है। इस पंचायत में बांधों को मजबूत बनाने के लिए सीमेंट और पत्थर की जगह पर नारियल रेशा निगम की जियो टेक्सटाइल टेक्नोलॉजी का प्रयोग करने का फैसला किया है। कल्लियूर और बेंगनूर गांवों की पंचायतें इस परियोजना के क्रियान्वयन के लिए जिम्मेदार हैं। तिरुवनंपुरम जिले के इस एकमात्र वर्षापोषित ताजे जल की झील के लिए संरक्षण परियोजना को विभिन्न चरणों में लागू किया जाएगा।

वेल्लयानी झील एक अनोखा परितंत्र प्रस्तुत करती है। इस झील के अनोखे परितंत्र को सुरक्षित रखने और इस झील के पानी पर निर्भर गांव के लिए पर्याप्त पेयजल की उपलब्धता को सुनिश्चित करने के लिए एक बहुआयामी रणनीति की आवश्यकता है।

(पसूका से साभार)

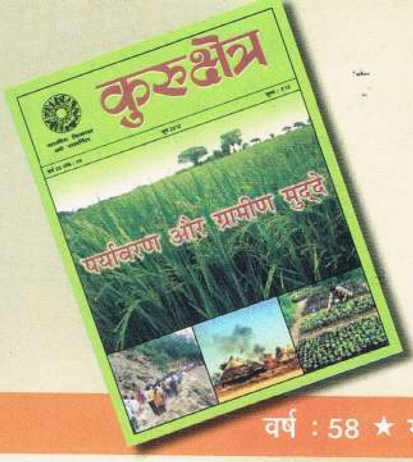

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष : 58 ★ मासिक अंक : 08 ★ पृष्ठ : 48 ★ ज्येष्ठ – आषाढ़ 1934 ★ जून 2012

प्रधान संपादक
रीना सोनोवाल कौली
वरिष्ठ संपादक
कैलाश चन्द मीना
संपादक
ललिता खुराना

संपादकीय पत्र–व्यवहार
वरिष्ठ संपादक,
कमरा नं. 655, 'ए' विंग,
गेट नं. 5, निर्माण भवन
ग्रामीण विकास मंत्रालय
नई दिल्ली–110 011
दूरभाष : 23061014, 23061952
फैक्स : 011–23061014, तार : ग्राम विकास
वेबसाइट : Publicationsdivision.nic.in
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

संयुक्त निदेशक
विनोद कुमार मीना
व्यापार प्रबंधक
सूर्यकांत शर्मा
दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516
ई–मेल : pdjucir_jcm@yahoo.co.in
आवरण एवं सज्जा
संजीव सिंह और संजीव कुमार साणू

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

इस अंक में

पर्यावरण संरक्षण का हो सामूहिक प्रयास — चंद्रभान यादव — 3

जलवायु परिवर्तन की चुनौतियां — जितेन्द्र द्विवेदी — 9

पर्यावरण संरक्षण में चिपको आंदोलन की प्रासंगिकता — संतोष कुमार सिंह — 13

बदलते पर्यावरण का खेती पर प्रभाव — डॉ. पारस जैन एवं कविता दवे — 19

पर्यावरण संरक्षण में ग्रामीण महिलाओं का योगदान — डॉ. अनीता मोदी — 26

ग्वार एक बहु-उपयोगी फसल — डॉ. वीरेन्द्र कुमार एवं वाई.एस.राठी — 31

स्वास्थ्य का खजाना है गूलर — अनिल कुमार — 37

सफाईकर्मी महिला ने रचा इतिहास — सुमन यादव — 44

कुरुक्षेत्र की एजेंसी लेने, ग्राहक बनने और अंक न मिलने की शिकायत के बारे में व्यापार प्रबंधक, (वितरण एवं विज्ञापन) प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से पत्र–व्यवहार करें। विज्ञापनों के लिए सहायक विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, लेवल–7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली–110 066 से संपर्क करें। दूरभाष : 26105590, फैक्स : 26175516

कुरुक्षेत्र में प्रकाशित लेखों में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं। यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी वही हो।

संपादकीय

"यदि विश्व को संभावित प्रलयकारी पर्यावरणीय परिस्थितियों से बचाना है तो तत्काल आवश्यकता है कि विश्व के विकसित देश कार्बन उत्सर्जन में त्वरित कटौती करें एवं विकासशील अर्थव्यवस्थाएं भी इस दिशा में प्रभावी कदम उठाए"। संयुक्त राष्ट्र संघ विकास कार्यक्रम की उक्त टिप्पणी विश्व को पर्यावरण संकट की चेतावनी देते हुए तत्काल ठोस एवं प्रभावी कदम उठाए जाने की आवश्यकता को रेखांकित करती है।

जलवायु परिवर्तन की चुनौती भले ही रोजमर्रा की आजीविका के संघर्ष एवं व्यस्त दिनचर्या में लगे लोगों के लिए महज खबर या अकादमिक विषय सामग्री मात्र ही हो, सच्चाई तो यह है कि दूषित हवा, पानी से जुड़ी इस समस्या से हम सभी का जीवन किसी न किसी रूप में प्रभावित हो रहा है। भारत में जलवायु परिवर्तन के एक प्रभाव के रूप में बाढ़ व सूखे को देखा जा सकता है। देश का बहुत बड़ा क्षेत्र बाढ़ की विभीषिका को झेलता आ रहा है। वहीं दूसरी ओर तापमान वृद्धि एवं वाष्पीकरण की दर तीव्र होने के परिणामस्वरूप सूखाग्रस्त क्षेत्र बढ़ता जा रहा है।

यूं तो पर्यावरण के प्रति जागरुकता भारतीय समाज में आदिकाल से रही है। भारतीय मनीषियों ने हजारों वर्ष पूर्व प्राकृतिक व्यवस्था को आत्मसात करने का मार्ग अपनाया चूंकि प्रकृति के साथ छेड़छाड़ पूरे जीवमंडल के लिए खतरा बन सकता था। पर्यावरण के तत्वों–जल, पृथ्वी, वायु, अग्नि, आकाश, वनस्पति आदि के प्रति वेदों में भी असीम श्रद्धा देखी जा सकती है। इसके अलावा पुराण, उपनिषद्, श्रीमदभागवत गीता, रामायण, महाभारत आदि में इस तथ्य के ज्वलंत प्रमाण मिलते हैं कि हमने सदैव प्रकृति की पूजा की है। हमारे देश में आज भी ग्रामीण महिलाएं वृक्षों, नदियों एवं कुंओं की पूजा–अर्चना करती हैं जोकि उनके प्रकृति प्रेम एवं प्रकृति के प्रति आस्था का परिचायक है। लेकिन विकास की दौड़ में हम अपने संस्कारों को भूल रहे हैं जोकि चिंता का विषय है।

गांवों में हर स्तर पर विकास की चकाचौंध दिख रही है। विकास की इस दौड़ में सबसे बड़ी चुनौती पर्यावरण संकट की है। पर्यावरण को संरक्षित करना आज बेहद जरूरी हो गया है। गांव से लेकर शहर तक तेजी से विकास हो रहा है। विकास की इस दौड़ में सबसे ज्यादा नुकसान जंगलों का हुआ है। जंगल किसी न किसी रूप में ग्रामीण जनजीवन से जुड़े हुए हैं। ये ग्रामीणों के लिए जहां जीवनयापन के साधन बनते हैं वहीं पर्यावरण की सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। ग्रामीण जनजीवन में खाना बनाने से लेकर पशु संपदा समृद्धि में जंगलों की उल्लेखनीय भूमिका है। इसके महत्व को देखते हुए बढ़ते वनविनाश को रोकना बेहद जरूरी है।

आज वृक्षों को बचाने के लिए हर व्यक्ति को अपने स्तर पर प्रयास करना होगा। यदि हम अपने उपयोग के लिए एक पेड़ काटते हैं तो कम से कम एक पौधा लगाने और उसे पोषित करने की भी जिम्मेदारी निभानी होगी। अन्यथा आने वाली पीढ़ियां लकड़ी के लिए तरसेंगी। जंगल बचाने की दिशा में किए जा रहे सरकारी प्रयासों में भी अपनी भूमिका निभानी होगी।

विकास की दौड़ में जीवन की सबसे मूल्यवान प्राकृतिक संपदा जल का भी संकट पैदा हो रहा है। जो पानी बचा हुआ है वह प्रदूषित होता जा रहा है। यही वजह है कि जलसंकट से निबटने के लिए पुख्ता रणनीति बनाई जा रही है। राज्य सरकारों और केंद्र सरकार ने जल को बचाने और प्रदूषित जल की समस्या से निपटने के लिए बजट में उल्लेखनीय वृद्धि की है चूंकि जल ही जीवन है।

ग्रामीण विकास की दौड़ में पशु–पक्षियों पर भी प्रभाव पड़ रहा है। तमाम प्रजातियां विलुप्त होती जा रही हैं तो कई संकट से जूझ रही हैं। सरकार की ओर से पशु–पक्षियों को संरक्षित करने की दिशा में तमाम कदम उठाए जा रहे हैं लेकिन सामूहिक प्रयास के बिना यह संभव नहीं है। केन्द्र सरकार की ओर से ग्रामीण स्तर पर पर्यावरण को संरक्षित करने के लिए ओर भी महत्वपूर्ण कदम उठाए गए हैं इसमें स्वच्छता अभियान सर्वोपरि है। संपूर्ण स्वच्छता अभियान के तहत जहां गांवों में शौचालयों का निर्माण कराया जा रहा है वहीं अवशिष्टों को संघटित करने की दिशा में भी महत्वपूर्ण प्रयास किए जा रहे हैं।

ग्रामीण स्तर पर संपूर्ण स्वच्छता अभियान के तहत सफाई हो रही है। इस दिशा में बेहतर काम करने वाली पंचायतों को पुरस्कृत किया जा रहा है। इससे ग्रामीणों में स्वच्छता एवं पर्यावरण को लेकर जागरुकता आई है। इसके साथ ही कूड़े को निस्तारित करने और उसे खाद के रूप में प्रयोग करने के लिए भी ग्रामीणों को जागरूक किया जा रहा है। इन सबके बीच गोबर गैस को वैकल्पिक ऊर्जा के रूप में प्रयोग करने के लिए ग्रामीणों को जागरूक किया जा रहा है।

पर्यावरण संरक्षण की दिशा में केंद्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम का भी महत्वपूर्ण स्थान है। राज्य सरकारों द्वारा इस दिशा में किए जा रहे प्रयासों को केन्द्र सरकार केंद्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के तहत तकनीकी और वित्तीय सहायता प्रदान कर और मजबूती प्रदान कर रही है। स्वच्छता के विचार को विस्तारित कर 1993 में व्यक्तिगत स्वच्छता, गृह स्वच्छता, सुरक्षित पेयजल तथा कूड़े–कचरे, मानव मलमूत्र और नाली के दूषित पानी के निस्तारण को इसमें शामिल किया गया है।

संक्षेप में, सरकारी स्तर पर किए जा रहे प्रयासों को ओर तेज करने की जरूरत है। साथ ही, समय आ गया है जब हर नागरिक को भी अपनी जिम्मेदारी समझनी होगी। और पर्यावरण संरक्षण के यज्ञ में अपनी आहूति देनी होगी।

पर्यावरण संरक्षण का हो सामूहिक प्रयास

चंद्रभान यादव

केन्द्र सरकार की ओर से ग्रामीण विकास के साथ ही पर्यावरण संरक्षण की दिशा में भी अनोखी पहल की जा रही है। ग्रामीण विकास संबंधी योजनाओं को लागू करते वक्त पर्यावरण पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। फिर भी पर्यावरण संरक्षण के लिए सामूहिक भागीदारी निभानी होगी। हर व्यक्ति जिस तरह से विकास को तवज्जो देता है, उसी तरह से पर्यावरण संरक्षण की दिशा में भी उसे अपनी भूमिका निभानी होगी। ग्रामीण स्तर पर चलाए जा रहे विभिन्न कार्यक्रमों में पर्यावरण को सर्वोपरि मानना होगा। इसके लिए सबसे उपयुक्त तरीका है कम से कम रासायनिक का प्रयोग करना और अधिक से अधिक पौधारोपण। ज़रूरतों के लिए पेड़ काटते वक्त एक पौधा लगाने और उसे संरक्षित करने की भी जिम्मेदारी निभानी होगी।

जिस गति से ग्रामीण विकास हो रहा है, उसी तरह से हमारे सामने कई तरह की चुनौतियां भी खड़ी होती जा रही हैं। ऐसी स्थिति में हमें विकास के साथ ही उन चुनौतियों को लेकर भी सजग रहना होगा। जहां तक ग्रामीण विकास की बात है तो गांवों में हर स्तर पर विकास की चकाचौंध दिख रही है। विकास की इस चकाचौंध में सबसे बड़ी चुनौती पर्यावरण संकट की है। पर्यावरण को संरक्षित करना आवश्यक हो गया है। यदि अभी से इस मुद्दे पर गंभीरता नहीं दिखाई गई तो भविष्य की स्थिति काफी गंभीर हो जाएगी। पर्यावरण की अनदेखी करने की वजह से आज हमारे पास शुद्ध पेयजल का अभाव है। सांस लेने के लिए शुद्ध हवा कम पड़ने लगी है। वन्य जीव विलुप्त हो रहे हैं। पहले गांवों में बाग–बगीचों की भरमार थी, लेकिन अब बाग–बगीचों की जगह इमारतें नजर आती हैं। निश्चित रूप से इन इमारतों का बनना विकास का प्रतीक है, लेकिन पर्यावरण प्रदूषण का बढ़ना हमारे जीवन के लिए खतरा है। जिस तरह से विकास की परिभाषा व्यापक है, उसी तरह से पर्यावरण की परिभाषा में जल, जंगल, जमीन और खेतीबाड़ी से लेकर मौसम तक शामिल है। हमें हर स्तर पर सावधानी बरतने की जरूरत है।

आज हमारे सामने ग्लोबल वार्मिंग की समस्या है। इसका मूल कारण ग्रीन हाउस गैसों से जोड़ा जाता है। जहां तक ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन का सवाल है तो सर्वाधिक उत्सर्जन के मामले में भारत ने काफी सावधानी बरती है, लेकिन वैश्विक स्तर पर पश्चिमी देश भारत से कई गुना अधिक उत्सर्जन कर रहे हैं जिसकी वजह से ओजोन परत लगातार क्षतिग्रस्त हो रही है। विश्वव्यापी गर्मी (ग्लोबल वार्मिंग) का कारण ओजोन का क्षरण ही है। सबसे अधिक (21.3 प्रतिशत) ग्रीन हाउस गैसें विद्युत निर्माण संयंत्रों से निकलती हैं। इनमें परमाणु ऊर्जा से बनने वाली बिजली का योगदान सर्वाधिक है। परमाणु ऊर्जा संयंत्रों से होने वाले महाविनाश का ताजा उदाहरण जापान है। इससे पूर्व सोवियत संघ में हुई चेर्नोबल दुर्घटना भी बहुत पुरानी नहीं है। इसके बाद 16.8 प्रतिशत ग्रीन हाउस गैसें औद्योगिक इकाइयों से तथा 14 प्रतिशत परिवहन से उत्पन्न होती हैं। इन दिनों खेती में अन्न के बदले जैविक ईंधन उगाने का फैशन चल निकला है। इस ईंधन से भी 11.3 प्रतिशत ग्रीन हाउस गैसें उत्पन्न हो रही हैं।

फिलहाल भारत के गांवों में जब तक पर्यावरण का ध्यान नहीं रखा जाएगा, तब तक विकास की अवधारणा पूरी नहीं होगी। हालांकि केंद्र सरकार की ओर से इस दिशा में बेहतर प्रयास किए जा रहे हैं। ग्रामीण स्तर पर पर्यावरण को संरक्षित करने के लिए कई महत्वपूर्ण कदम उठाए गए हैं। इसमें स्वच्छता अभियान सर्वोपरि है। संपूर्ण स्वच्छता अभियान के तहत जहां गांवों में शौचालय का निर्माण कराया जा रहा है वहीं अवशिष्टों को संधारित करने की दिशा में भी महत्वपूर्ण प्रयास किए जा रहे हैं। ग्रामीण स्तर पर संपूर्ण स्वच्छता अभियान के तहत सफाई हो रही है। इस दिशा में बेहतर काम करने वाली पंचायतों को पुरस्कृत किया जा रहा है। इससे ग्रामीणों में स्वच्छता एवं पर्यावरण को लेकर जागरुकता आई है। इसके साथ ही कूड़े को निस्तारित करने और उसे खाद के रूप में प्रयोग करने के लिए भी ग्रामीणों को जागरूक किया जा रहा है। इन सबके बीच गोबर गैस को वैकल्पिक ऊर्जा के रूप में प्रयोग करने के लिए ग्रामीणों को जागरूक किया जा रहा है।

गांवों में कैसे हो विकास के साथ पर्यावरण संरक्षण

गांवों में विकास के साथ ही पर्यावरण संरक्षण की दिशा में केंद्र सरकार के केंद्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम का महत्वपूर्ण स्थान है। राज्य सरकारों द्वारा इस दिशा में किए जा रहे प्रयासों को केंद्र सरकार केंद्रीय ग्रामीण स्वच्छता कार्यक्रम के तहत तकनीकी और वित्तीय सहायता प्रदान कर और मजबूती प्रदान कर रही है। स्वच्छता के विचार को विस्तारित कर 1993 में व्यक्तिगत स्वच्छता, गृह स्वच्छता, सुरक्षित पेयजल तथा कूड़े–कचरे, मानव मलमूत्र और नाली के दूषित पानी के निस्तारण को इसमें शामिल किया गया है। गरीबी रेखा के नीचे जीवनयापन कर रहे परिवारों के लिए स्वच्छ शौचालयों का निर्माण, शुष्क शौचालयों का फ्लश शौचालयों में उन्नयन, महिलाओं के लिए ग्राम स्वच्छता भवनों का निर्माण, स्वच्छता बाजारों तथा उत्पादन केंद्रों की स्थापना, स्वास्थ्य शिक्षा और जागरुकता के लिए सघन अभियान चलाना आदि भी इस कार्यक्रम के अंग हैं।

पशुओं के गोबर एवं अन्य अवशिष्ट का प्रबंधन

ग्रामीण इलाके में कृषि के साथ ही पशुपालन जुड़ा हुआ है। कुछ समय पहले पशुओं के गोबर से निकलने वाली मिथेन गैस को धरती का तापमान बढ़ने का कारण बताया गया था। इसी तरह निरर्थक रूप से गोबर के जल में मिलने से जल भी प्रदूषित हो जाता है। इसे ध्यान में रखते हुए सरकार किसानों को पशुओं के गोबर का उचित प्रयोग करने की दिशा में न सिर्फ ट्रेनिंग दे रही है बल्कि इसके लिए अनुदान की भी व्यवस्था की गई है। इसके लिए जहां जैविक खेती के प्रति किसानों को आकर्षित किया जा रहा है वहीं गोबर गैस प्लांट लगाने के लिए अनुदान की व्यवस्था की जा रही है। ऐसे में किसान गोबर के साथ ही अन्य कूड़ा–करकट भी संधारित करके खाद तैयार कर रहे हैं। इसे बड़े पैमाने पर विस्तारित करने की जरूरत है। यदि हर किसान जैविक एवं कंपोस्ट खाद तैयार करने लगे तो पर्यावरण संरक्षण की दिशा में महत्वपूर्ण काम होगा। इससे किसानों का पैसा भी बचेगा और अधिक उत्पादन भी मिलेगा। साथ ही रासायनिक खादों और कीटनाशक से भी मुक्ति मिल जाएगी।

मशीनीकरण का प्रभाव

वैश्विक गर्मी का कारण मशीनीकरण भी माना जाता है। जहां मोटर–गाड़ियों में हजारों लीटर डीजल–पेट्रोल खर्च होता है वहीं कृषि कार्य में भी अब डीजल–पेट्रोल की खपत बढ़ने लगी है। मशीनीकरण से जहां पर्यावरण प्रदूषण हो रहा है वहीं ग्रामीण विकास में अहम भूमिका निभाने वाली मधुमक्खी, तितली और गौरैया सहित अन्य जीव–जन्तु खत्म हो रहे हैं। हमारी कोशिश होनी चाहिए कि ज्यादा से ज्यादा काम प्रदूषणरहित तरीके से करें। उदाहरण के तौर पर देखें तो घर से खेत, विद्यालय और बाजार आदि की दूरी कम होने के बाद भी हम वाहनों का प्रयोग करते हैं जबकि यह दूरी साइकिल से भी तय की जा सकती है।

कृषि और पर्यावरण

गांवों में कृषि कार्य अच्छे से हो, कुएं–तालाब, बावड़ियों की सफाई यथा समय हो, गंदगी से बचाव के उपाय किए जाएं। संक्षेप में यह कि वहां ग्रामीण विकास योजनाओं का ईमानदारीपूर्वक संचालन हो तो ग्रामों का स्वरूप निश्चय ही बदलेगा और वहां के पर्यावरण से प्रभावित होकर शहर से जाने वाले नौकरीपेशा भी वहां रहने को आतुर होंगे।

खेतों में रसायनों का असंतुलित प्रयोग– भूमि की उर्वरता बढ़ाने के लिए रासायनिक खाद का तथा फसल को कीड़ों और रोगों से बचाने के लिए कीटनाशक दवाओं का उपयोग किया जाता है, जो भूमि को प्रदूषित कर देते हैं। इनके कारण भूमि को लाभ पहुंचाने वाले मेंढक व केंचुआ जैसे जीव नष्ट हो जाते हैं जबकि फसलों

को क्षति पहुंचाने वाले कीड़े–मकोड़ों से बचाव में यही जीव सहायक होते हैं। इसलिए कृषि फसल में एलगी, कम्पोस्ट खाद तथा हरी खाद का उपयोग किया जाना चाहिए ताकि खेतों में ऐसे लाभदायक जीवों की वृद्धि हो सके जो खेती की उर्वराशक्ति बढ़ा सकें। कृषि तथा अन्य कार्यों में कीटनाशकों के प्रयोग की बात करें तो विश्व स्वास्थ्य संगठन ने अधिकांश कीटनाशकों को विषैला घोषित किया है, बावजूद इसके हमारे देश में तो इनका प्रयोग धड़ल्ले से हो रहा है। इसे रोकने की जरूरत है। कोशिश होनी चाहिए कि अधिक से अधिक जैविक खाद और रसायन का प्रयोग करें। इससे पर्यावरण संरक्षण होगा और हमें फायदा भी मिलेगा।

मिट्टी का कटान– भारत के एक अनुमान के तहत खेती योग्य भूमि का 60 फीसदी भूमि कटाव, जलभराव और लवणता से ग्रस्त है। यह भी अनुमान है कि मिट्टी की ऊपरी परत में से प्रतिवर्ष 4.7 से 12 अरब टन मिट्टी कटाव के कारण खो रही है। पानी के साथ बहने वाली यह मिट्‌टी अपने साथ विभिन्न रासायनिक तत्वों को भी ले जाती है। इससे बचने के लिए खेतों की मेड़बंदी करना जरूरी है। मिट्‌टी का कटाव रोककर हम कई तरह के फायदे ले सकते हैं। इसके लिए हमें पौधारोपण का फंडा अपनाना होगा।

ग्रामीण जीवन में जंगल की महत्ता

गांव से लेकर शहर तक तेजी से विकास हो रहा है। विकास की इस दौड़ में सबसे ज्यादा नुकसान जंगलों का हुआ है। जंगल जिस तरह से प्रभावित हो रहे हैं, उसका सबसे ज्यादा असर भी गांवों पर ही पड़ेगा क्योंकि जंगल किसी न किसी रूप में ग्रामीण जनजीवन से जुड़े हुए हैं। ये ग्रामीणों के लिए जहां जीवनयापन के साधन बनते हैं, वहीं पर्यावरण की सुरक्षा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते

जर्मनी में कचरा से कार चलाने की तैयारी

जर्मनी के टुट्गार्ट शहर में कचरा प्रबंधन की दिशा में महत्वपूर्ण काम किया गया है। यहां कचरे के जरिए कार चलाने की तैयारी है। इससे एक तरफ जहां कचरे का प्रबंधन होगा, वहीं पेट्रोल की समस्या से भी निजात मिलेगा। टुट्गार्ट शहर को जर्मनी के आटोमोबाइल नगर के रूप में पहचाना जाता है। यहां फल और सब्जियों के कचरे को इकट्ठा करके बायोगैस तैयार किया गया। अब यहां बायोगैस सर्विस स्टेशन बनाने की तैयारी चल रही है, जहां से लोग अपनी कार में गैस डलवा सकेंगे। एक अंग्रेजी वेबसाइट के मुताबिक जर्मनी में हर साल करीब 11 मीट्रिक टन फल एवं सब्जियां कचरे में फेंक दी जाती हैं। अकेले टुट्गार्ट में हर साल करीब दो हजार किलो ग्रीन कचरा होता है। इसे या तो फेंक दिया जाता है अथवा नगर निगम इससे खाद तैयार करता है। इससे पहले जर्मनी के कई राज्यों में बायोगैस के जरिए घर को गर्म रखने का सिस्टम चलाया जा रहा है। इससे बिजली की बचत होती है। अब नए प्रयोग के तहत इससे कार चलाने की तैयारी है। इस नए प्रोजेक्ट में फ्राउएनहोफर संस्थान का इंटरफेशियल इंजीनियरिंग और बायोटेक्नोलॉजी विभाग मदद कर रहा है। इसके लिए जर्मनी के शोध मंत्रालय से 60 लाख यूरो की राशि जारी की गई है। इस प्रोजेक्ट के जरिए बाजार से कचरा एकत्रित कर उसे सड़ाया जाएगा। सड़ांध से मीथेन गैस बनेगी। इस मीथेन गैस का प्रयोग ही कार में किया जाएगा। यह गैस सीएनजी की अपेक्षा काफी सस्ती पड़ेगी। फ्राउएनहोफर संस्थान के रिसर्चर उर्सुला लीसमान के मुताबिक जैविक कचरे में पानी बहुत होता है और लिग्निन, लिगनोसेल्यूलोज कम होता है। इससे वह आसानी से अपघटित हो जाता है। फल में साइट्रिक एसिड होता है। इस तरह सभी कचरे किसी न किसी रूप में हमारे लिए उपयोगी साबित होंगे। इसी तरह सड़े हुए कचरे से निकले पानी में नाइट्रोजन और फास्फोरस होती है। इसे काई की पैदावार बढ़ाने में इस्तेमाल किया जा सकता है। काई से डीजल इंजन के लिए ऑयल बन सकता है।

हैं। ग्रामीण इलाके में खाना बनाने के लिए लकड़ी की जरूरत पड़ती है तो घर बनाने से लेकर तमाम उपकरण बनाने में भी इनका प्रयोग होता है। साथ ही पशु संपदा समृद्धि में भी जंगलों की भूमिका उल्लेखनीय है। इसके बाद भी जंगल कम हो रहे हैं। इसे बचाने की जरूर है। यदि इसी तरह से जंगलों की कटाई होती रही तो आने वाले दिनों में लोगों को लकड़ी के लिए तरसना पड़ेगा। बाजार में जिस तरह से दूसरी चीजों के दाम बढ़ रहे हैं, उससे कई गुना अधिक लकड़ी के दाम बढ़े हैं, लेकिन शहरों की अपेक्षा गांवों में अभी भी पेड़ों की संख्या बरकरार है। यही वजह है कि काम चल रहा है, लेकिन लोगों को जंगलों की महत्ता अभी कम समझ में आ रही है। यदि यही हाल रहा तो भविष्य में स्थिति काफी गंभीर हो सकती है। इस वजह से जंगलों को बचाने के लिए हर व्यक्ति को अपने स्तर पर प्रयास करना होगा। यदि हम अपने उपयोग के लिए एक पेड़ काटते हैं तो कम से कम एक पौधा लगाने और उसे पोषित करने की भी जिम्मेदारी निभानी होगी। अन्यथा आने वाली पीढ़ियां लकड़ी के लिए तरसेंगी। जंगल बचाने की दिशा में किए जा रहे सरकारी प्रयासों में भी अपनी भूमिका निभानी होगी।

सरकार ने भी जंगल की स्थिति पर जताई चिंता

सरकार की ओर से जारी एक रिपोर्ट में आशंका जताई गई है कि जलवायु परिवर्तन से भारतीय जंगलों पर प्रभाव पड़ रहा है। रिपोर्ट के मुताबिक जलवायु परिवर्तन से उच्च हिमालयी क्षेत्र के जंगल खासतौर पर प्रभावित होते जा रहे हैं। इन इलाकों में अत्यधिक कटाई, मवेशियों द्वारा घास चरने जैसी अनेक चुनौतियां पहले से ही मौजूद हैं। जलवायु परिवर्तन पर संयुक्त राष्ट्र फ्रेमवर्क कन्वेंशन को भेजे जाने वाले दूसरें राष्ट्रीय संदेश में भी पर्यावरण मंत्री ने चिंता जताई है। उन्होंने कहा कि जलवायु के प्रभावों का आकलन दर्शाता है कि राष्ट्रीय स्तर पर 45 प्रतिशत वन्य क्षेत्रों में बदलाव हो सकते हैं। रिपोर्ट में सभी वन्य क्षेत्रों की स्थिति दर्शाने के लिए देश के डिजिटल वन्य नक्शे का इस्तेमाल किया गया है। इसमें भारत के पूरे क्षेत्र को 1,65,000 ग्रिडों में बांटा गया है। इनमें से 35,899 वन ग्रिड के तौर पर चिंह्ति हैं। संयुक्त राष्ट्र समझौते के तहत उसे जानकारी देने की प्रतिबद्धता को पूरा करने के लिहाज से पर्यावरण मंत्रालय द्वारा तैयार रिपोर्ट के मुताबिक इन वन क्षेत्रों की सघनता उच्च हिमालयी पट्टियों, मध्य भारत के हिस्सों, उत्तरी–पश्चिमी घाटों एवं पूर्वी घाटों में ज्यादा है। रिपोर्ट के अनुसार अधिकतर पर्वतीय जंगलों पर जलवायु परिवर्तन का प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की आशंका है। इनमें हिमालय के शुष्क तापमान वाले और हिमालयी आर्द्र तापमान वाले जंगल शामिल हैं। इसके विपरीत पूर्वोत्तर के जंगलों, दक्षिणी–पश्चिमी घाटों और पूर्वी भारत के वन्य क्षेत्रों के इस लिहाज से कम प्रभावित होने का अनुमान है। रिपोर्ट

में कहा गया है कि भारत वैश्विक समुदाय के प्रति अपनी जिम्मेदारियों के लिए प्रतिबद्ध है। भारत कार्बन उत्सर्जन को कम करने के लिए अपनी तरफ से कदम उठा रहा है। हमें कई क्षेत्रों में सफलता भी मिली है। हालांकि इस तथ्य को नहीं नकारा जा सकता है कि पर्वतीय जंगलों पर जलवायु परिवर्तन का खतरा मंडरा रहा है। इस संबंध में कदम उठाया जाना बेहद जरुरी हो गया है। ये जंगल पहले से ही कई समस्याओं का सामना कर रहे हैं। औद्योगिक प्रगति का दबाव भी इन जंगलों पर है।

बचाना होगा वन्य जीवों को

ग्रामीण जनजीवन में चक्रिय व्यवस्था है। मानव जीवन के लिए पशु–पक्षियों का भी बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान है। इनके जरिए पर्यावरण का चक्रण बना रहता है लेकिन ग्रामीण विकास की दौड़ में पशु–पक्षियों पर भी प्रभाव पड़ रहा है। तमाम प्रजातियां लुप्त होती जा रही हैं तो कई संकट से जूझ रही हैं। भारत में 50 करोड़ से भी अधिक जानवर हैं जिनमें से पांच करोड़ प्रति वर्ष मर जाते हैं और साढ़े छह करोड़ नए जन्म लेते हैं। वन्य प्राणी प्राकृतिक संतुलन स्थापित करने में सहायक होते हैं। उनकी घटती संख्या पर्यावरण के लिए घातक है। सरकार की ओर से पशु–पक्षियों को संरक्षित करने की दिशा में तमाम कदम उठाए जा रहे हैं, लेकिन सामूहिक भागीदारी के बिना यह प्रयास पूरा नहीं हो सकता है। पर्यावरण की दृष्टि से वन्य प्राणियों की रक्षा अनिवार्य है।

जल प्रदूषण बनी चुनौती

विकास की दौड़ में जीवन की सबसे मूल्यवान प्राकृतिक संपदा जल खत्म होता जा रहा है। जो पानी बचा हुआ है वह प्रदूषित होता जा रहा है। यही वजह है कि जल संकट से निबटने के लिए पुख्ता रणनीति बनाई जा रही है। राज्य सरकारें और केंद्र सरकार जल को बचाने और प्रदूषित जल से मुक्ति पाने के लिए बजट में करोड़ों रुपये का प्रावधान कर रही है क्योंकि जल ही जीवन है। प्राणी कुछ समय के लिए भोजन के बिना तो रह सकता है लेकिन पानी के बिना नहीं। यह सच है कि पृथ्वी का तीन चौथाई हिस्सा जलमग्न है फिर भी क़रीब 0.3 फीसदी जल ही पीने योग्य है। विभिन्न उद्योगों और मानव बस्तियों के कचरे ने जल को इतना प्रदूषित कर दिया है कि पीने के करीब 0.3 फीसदी जल में से मात्र करीब 30 फीसदी जल ही वास्तव में पीने के लायक रह गया है। नदियों एवं अन्य जलस्रोतों में कारखानों से निष्कासित रासायनिक पदार्थ व गंदा पानी मिल जाने से वह प्रदूषित हो जाता है। नदियों के किनारे बसे नगरों में जले–अधजले शव तथा मृत जानवर नदी में फेंक दिए जाते हैं। कृषि उत्पादन बढ़ाने और कीड़ों से उनकी रक्षा हेतु जो रासायनिक खाद एवं कीटनाशक प्रयोग में लाए जाते हैं वे वर्षा के जल के साथ बहकर अन्य जल–स्रोतों में मिल जाते हैं और प्रदूषण फैलाते हैं। नदियों, जलाशयों में कपड़े धोने, कूड़ा–कचरा फेंकने व मलमूत्र विसर्जित करने से भी यह स्थिति पैदा होती है। विश्व में 260 नदी बेसिन ऐसे हैं, जो सिर्फ एक ही नहीं बल्कि कई देशों तक पहुंचते हैं। एक अनुमान के मुताबिक दुनिया में आधी से ज्यादा नदियां प्रदूषित हो चुकी हैं और इनका पानी पीने योग्य नहीं रहा है और इन नदियों में पानी की आपूर्ति भी निरन्तर कम हो रही है। हमें पीने का पानी ग्लेशियरों से प्राप्त होता है और ग्लोबल वार्मिंग की वजह से ग्लेशियर का पानी भी हमसे दूर होता जा रहा है।

दुनिया में जल उपलब्धता 1989 में 9000 क्यूबिक मीटर प्रति व्यक्ति थी जो 2025 तक 5100 क्यूबिक मीटर प्रति व्यक्ति हो जाएगी और यह स्थिति मानव जाति के संकट की स्थिति होगी। विश्व स्वास्थ्य संगठन के एक अध्ययन के अनुसार दुनिया भर में 86 फीसदी से अधिक बीमारियों का कारण असुरक्षित व दूषित पेयजल है। वर्तमान में 1600 जलीय प्रजातियां जल प्रदूषण के कारण लुप्त होने के कगार पर हैं। अगर हम भारत की बात करें तो यहां वर्तमान में 303.6 मिलियन क्यूबिक फीट पानी प्रतिवर्ष एशियाई नदियों को हिमालय के ग्लेशियर्स से प्राप्त हो रहा है। भारत में सिंचाई कार्यों के लिए 70 प्रतिशत जल भूमिगत जल स्रोतों से प्राप्त होता है और घरेलू कार्यों के लिए 80 प्रतिशत जल की आपूर्ति भूमिगत जल स्रोतों से की जाती है। लेकिन यह भूमिगत जल भी अब प्रदूषित होता जा रहा है। दूसरी तरफ बढ़ती आबादी और बढ़ता औद्योगिकीकरण जल की खपत बढ़ा रहा है।

पैसा नहीं पर्यावरण प्रेम

पूरी दुनिया जहां पैसे के पीछे दौड़ रही है, वहीं भारतीयों ने एक नई मिसाल कायम की है। भारतीय पैसे से कहीं ज्यादा पर्यावरण को तवज्जो दे रहे हैं। यह खुलासा हुआ है अमेरिका की सर्वेक्षण कंपनी गैलप के ताजा सर्वे में। इस कंपनी की रिपोर्ट के मुताबिक दुनिया में सबसे तेजी से बढ़ रही अर्थव्यवस्थाओं में से एक भारत हरित अर्थव्यवस्था बनने का प्रयास कर रहा है। भारतीय आर्थिक वृद्धि पर पर्यावरण रक्षा को मामूली रूप से प्राथमिकता देते हैं। गैलप के अनुसार भारत ने वैश्विक भूभाग पर हरित क्षेत्र को बढ़ाने के उल्लेखनीय प्रयास किए हैं। इसकी एक बानगी राष्ट्रीय राजधानी दिल्ली है, जहां हाल के वर्षों में हरित क्षेत्र में वृद्धि दर्ज की गई है।

ऐसी स्थिति में हमारे सामने दोहरी चुनौतियां हैं। एक तरफ स्वच्छ पानी कम हो रहा है तो दूसरी तरफ पानी की जरूरत बढ़ रही है।

जल प्रदूषण की स्थिति

पर्यावरण संबंधी तमाम अध्ययन देश में जल प्रदूषण के दिनोंदिन भयावह होते जाने के बारे में चेताते रहते हैं। अब सीएजी यानी नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक ने भी इस बारे में आगाह किया है। विभिन्न प्रकार के रासायनिक खादों और कीटनाशकों के व्यापक इस्तेमाल ने खेतों को इस हालत में पहुंचा दिया है कि उनसे होकर रिसने वाला बरसात का पानी जहरीले रसायनों को नदियों में पहुंचा देता है। भूजल के गिरते स्तर और उसकी गुणवत्ता में कमी को लेकर कई अध्ययन सामने आ चुके हैं जिसमें कहा गया है कि देश में चौदह बड़ी, पचपन लघु और कई सौ छोटी नदियों में मल–जल और औद्योगिक कचरा लाखों लीटर पानी के साथ छोड़ा जाता है। जाहिर है कि यह कचरा किसी न किसी रूप में पानी के जरिए हमें प्रभावित करता है। एक अध्ययन के मुताबिक बीस राज्यों की सात करोड़ आबादी क्लोराइड और एक करोड़ लोग सतह के जल में आर्सेनिक की अधिक मात्रा घुल जाने के खतरों से जूझ रहे हैं। इसके अलावा, सुरक्षित पेयजल कार्यक्रम के तहत सतह के जल में क्लोराइड, टीडीसी, नाइट्रेट की अधिकता भी बड़ी बाधा बनी हुई है।

विश्व बैंक की एक रिपोर्ट के मुताबिक भारत में करीब साठ फीसदी बीमारियों की मूल वजह जल प्रदूषण है। जल प्रदूषण का मुख्य कारण मानव या जानवरों की जैविक या फिर औद्योगिक क्रियाओं के फलस्वरूप पैदा हुए प्रदूषकों को बिना किसी समुचित उपचार के सीधे जलधाराओं में विसर्जित कर दिया जाना है। हालांकि प्राकृतिक कारणों से भी जल की गुणवत्ता प्रभावित होती है। लेकिन अपशिष्ट उपचार संयंत्र के बगैर फैक्ट्रियों से निकलने वाले अवशिष्ट का पानी में मिलना सबसे बड़ा कारण है। ये रासायनिक तत्व पानी में मिलकर मानव या जानवरों में जलजनित बीमारियां पैदा करते हैं। कैल्शियम, मैग्नीशियम, सोडियम, पोटेशियम, आयरन, मैग्नीज की अधिकता और क्लोराइड, सल्फेट, कार्बोनेट, बाई–कार्बोनेट, हाइड्राक्साइड, नाइट्रेट की कमी के साथ ही आक्साइड, तेल, फिनोल, वसा, ग्रीस, मोम, घुलनशील गैसे (आक्सीजन, कार्बन–डाई–आक्साइड, नाईट्रोजन) आदि जल की वास्तविकता को प्रभावित करते हैं। जल प्रदूषण से बचने के लिए समय–समय पर नियम–कानून भी बनाए गए, लेकिन जिस अनुपात में जल प्रदूषण बढ़ रहा है, ये नियम–कानून कारगर साबित नहीं हो पा रहे हैं। हमारे देश में नदी अधिनियम 1951, 1961 में जल प्रदूषण पर व्यवस्थित तरीके से नियंत्रण स्थापित किया गया । इसके बाद प्रदूषण नियंत्रण अधिनियम 1984 बना। लेकिन ये कानून पूरी तरह से जल प्रदूषण रोकने में कारगर साबित नहीं हो पा रहे हैं।

वायु और ध्वनि प्रदूषण

जब गांवों में सड़कें पहुंची तो वहां वाहनों का शोर और उनका धुआं भी बढ़ने लगा है। दूसरी तरफ कल–कारखाने भी पहले से कई गुना अधिक बढ़े हैं। इसके विपरीत पेड़–पौधों की संख्या घटी है। चूंकि पेड़ –पौधे कार्बन–डाई–ऑक्साइड सहित अन्य हानिकारक गैस को ग्रहण कर हमारे लिए ऑक्सीजन उपलब्ध कराते हैं। जब पेड़–पौधों की संख्या कम है तो ऑक्सीजन का कम तैयार होना लाजिमी है। ऐसी स्थिति में वायु के साथ ध्वनि प्रदूषण भी बढ़ता जा रहा है। पर्यावरण के लिए वायु और ध्वनि प्रदूषण भी कम घातक नहीं हैं। वायु में 78 प्रतिशत नाइट्रोजन, 21 प्रतिशत ऑक्सीजन, 0.03 प्रतिशत कार्बन–डाई–ऑक्साइड तथा शेष निष्क्रिय गैसें और जल वाष्प होता है। हवा में विद्यमान ऑक्सीजन ही जीवधारियों को जीवित रखती है। मनुष्य आमतौर पर प्रतिदिन 22 हजार बार सांस लेता है और सोलह किलोग्राम ऑक्सीजन का उपयोग करता है जोकि उसके द्वारा ग्रहण किए जाने वाले भोजन और जल की मात्रा से बहुत अधिक है। इस समस्या से निजात पाने के लिए जहां हमें इससे निपटने के लिए कोयला, डीजल व पेट्रोल का उपयोग कम करना होगा वहीं कारखानों में चिमनियों की ऊंचाई बढ़ाते हुए फिल्टर का उपयोग करना होगा। इन सभी का असर कम करने के लिए पेड़–पौधों को संरक्षित करना होगा।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)
ई–मेलः Chandrabhan0502@gmail.com

जलवायु परिवर्तन की चुनौतियां

जितेन्द्र द्विवेदी

कृषि की उत्पादकता पूरी तरह से मौसम, जलवायु और पानी की उपलब्धता पर निर्भर होती है, इनमें से किसी भी कारक के बदलने अथवा स्वरुप में परिवर्तन से कृषि उत्पादन प्रभावित होता है। कृषि का प्रकृति से सीधा सम्बन्ध है, जल-जंगल-जमीन ही प्रकृति का आधार हैं और यही कृषि का भी। 5 जून, 2012 अन्तर्राष्ट्रीय पर्यावरण दिवस पर जलवायु परिवर्तन के कृषि पर पड़ने वाले प्रभाव पर उत्तर प्रदेश राज्य कृषि सलाहकार परिषद के सदस्य एवं गोरखपुर एनवायरंमेट्ल एक्शन ग्रुप के अध्यक्ष तथा पर्यावरणविद्, डॉ. शीराज वजीह की जितेन्द्र द्विवेदी से की गई खास बातचीतः

प्रश्नः जलवायु परिवर्तन का कृषि पर क्या प्रभाव पड़ रहा है?

उत्तरः आज पूरी दुनिया पर जलवायु परिवर्तन का प्रभाव पड़ रहा है। जलवायु में होने वाला यह परिवर्तन ग्लेशियर व आर्कटिक क्षेत्रों से लेकर उष्ण कटिबंधीय क्षेत्रों तक को प्रभावित कर रहा हैं। यह प्रभाव अलग–अलग रूप में कहीं ज्यादा तो कहीं कम पड़ रहा है। भारत का सम्पूर्ण क्षेत्रफल करीब 32.44 करोड़ हेक्टेयर है। इसमें से 14.26 करोड़ हेक्टेयर में खेती की जाती है। अर्थात देश के सम्पूर्ण क्षेत्र के 47 प्रतिशत हिस्से में खेती होती है। मौसम परिवर्तन देश की 80 प्रतिशत जनसंख्या को प्रभावित कर सकता है।

प्रश्नः जलवायु परिवर्तन की वजह से बाढ़ की प्रवृत्ति में किस प्रकार का बदलाव आया है?

उत्तरः भारत में मौसम बदलाव के एक प्रमुख प्रभाव के रूप में बाढ़ को देखा जा सकता है। देश का बहुत बड़ा क्षेत्र बाढ़ की विभीषिका को झेलता आ रहा है। परन्तु विगत दो दशकों से बाढ़ के स्वरूप, प्रवृत्ति व आवृत्ति में व्यापक परिवर्तन देखा जा रहा है। ऐसे बदलाव के चलते कृषि, स्वास्थ्य, जीवनयापन आदि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है और जान–माल,उत्पादकता आदि की क्षति का क्रम बढ़ा है। ऐसा नहीं है कि देश के लिए बाढ़ कोई नई बात है परन्तु मौसम में हो रहे बदलाव ने इस प्राकृतिक प्रक्रिया की तीव्रता व स्वरूप को बदल दिया है और बाढ़ की भयावहता आपदा के रूप में दिखाई दे रही है। इसमें विशेषकर तेज व त्वरित बाढ़ का आना, पानी का अधिक दिनों तक रुके रहना तथा लम्बे समय तक जल–जमाव की समस्या सामने आ रही है।

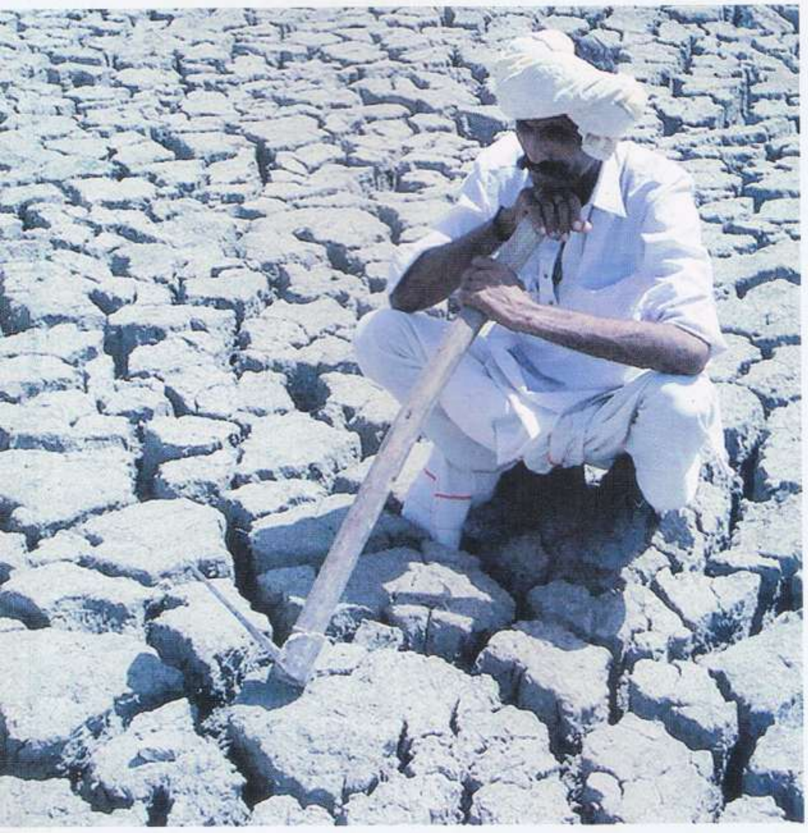

प्रश्नः जलवायु परिवर्तन का प्रभाव सूखे पर किस तरह पड़ा है?

उत्तरः मौसम बदलाव का दूसरा प्रमुख प्रभाव सूखे के रूप में देखा जा सकता है। तापमान वृद्धि एवं वाष्पीकरण की दर तीव्र होने के परिणामस्वरूप सूखाग्रस्त क्षेत्र बढ़ता जा रहा है। मौसम बदलाव के चलते वर्षा समयानुसार नहीं हो रही है और उसकी मात्रा में भी कमी आई है। मिट्टी की जलग्रहण क्षमता का कम होना भी सूखे का एक प्रमुख कारण है। बहुत से क्षेत्र जो पहले उपजाऊ थे आज बंजर हो गए हैं; वहां की उत्पादकता समाप्त हो गई है।

प्रश्नः जलवायु परिवर्तन का कृषि पर संभावित प्रभाव क्या–क्या है?

उत्तरः जलवायु परिवर्तन का कृषि पर संभावित प्रभाव निम्न हैः–

- सन् 2100 तक फसलों की उत्पादकता में 10–40 प्रतिशत की गिरावट/कमी आएगी।
- रबी की फसलों को ज्यादा नुकसान होगा। प्रत्येक 1 सेंटीग्रेड तापमान बढ़ने पर 4–5 करोड़ टन अनाज उत्पादन में कमी आएगी।
- सूखा और बाढ़ में बढ़ोतरी होने की वजह से फसलों के उत्पादन में अनिश्चितता की स्थिति होगी।
- खाद्य व्यापार में पूरे विश्व में असंतुलन बना रहेगा।
- पशुओं के लिए पानी, पशुशाला और ऊर्जा सम्बन्धी जरूरतें बढ़ेंगी विशेषकर दुग्ध उत्पादन हेतु।
- समुद्र व नदियों के पानी का तापमान बढ़ने के कारण मछलियों व जलीय जन्तुओं की प्रजनन क्षमता व उपलब्धता में कमी आएगी।
- सूक्ष्म जीवाणुओं और कीटों पर प्रभाव पड़ेगा। कीटों की संख्या में वृद्धि होगी तो सूक्ष्म जीवाणु नष्ट होंगे।
- वर्षा आधारित क्षेत्रों की फसलों में अधिक नुकसान होगा क्योंकि सिंचाई हेतु पानी की उपलब्धता भी कम होती जाएगी।

प्रश्नः जलवायु परिवर्तन का प्रभाव पूर्वी उत्तर प्रदेश पर किस प्रकार पड़ रहा है?

उत्तरः जलवायु परिवर्तन का प्रभाव पूर्वी उत्तर प्रदेश पर निम्न प्रकार से पड़ रहा है–

- पूर्वी उत्तर प्रदेश गंगा के मैदान का प्रमुख क्षेत्र है। गंगा का मैदान विश्व के उन कुछ क्षेत्रों में गिना जाता है जो कृषिगत दृष्टि से अत्यन्त उत्पादक हैं। वास्तव में विश्व को भोजन देने हेतु गंगा का मैदानी क्षेत्र सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र है।
- गंगा के मैदान व पूर्वी उत्तर प्रदेश आमतौर पर कृषि जलवायु

आधारित हैं और यह वर्षा, तापमान, आर्द्रता आदि के प्रति अत्यन्त संवेदनशील हैं। ऐसे में जलवायु परिवर्तन का सबसे अधिक प्रभाव भी इस क्षेत्र पर पड़ना स्वाभाविक है।

- सरयूपार मैदान नेपाल के पहाड़ों का निचला क्षेत्र है जो बाढ़ से प्रभावित रहा है। नेपाल में भी पड़ने वाले जलवायु परिवर्तन प्रभावों (जिसमें ग्लेशियरों का पिघलना व वर्षा की तीव्रता में बढ़त शामिल है) का भी सीधा प्रभाव सरयूपार मैदान के क्षेत्रों पर पड़ता है। सरयूपार के मैदान के ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों में जलवायु परिवर्तन का व्यापक प्रभाव पड़ रहा है।
- ग्रामीण क्षेत्रों में 90 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या छोटी जोत के किसानों की है। जलवायु परिवर्तन के कारण बाढ़ के स्वरूप में व्यापक परिवर्तन हुए हैं। बाढ़ के समय में व्यापक परिवर्तन आया है और अब बाढ़ जून–जुलाई में भी आ जाती है या अक्टूबर तक भी आती रहती है। जाड़ों के दिनों में 10–15 दिनों तक एकाएक तापमान बढ़ जाता है। गर्मी अब अधिक पड़ने लगी है। हाल के वर्षों में आर्द्रता बढ़ी है। गोरखपुर एनवायरमेंटल एक्शन ग्रुप द्वारा रोहिन नदी घाटी में किए गए अध्ययन में यह देखा गया कि मानसून के दिनों में आगामी 50 वर्षों में अधिक वर्षा होगी जिसका सीधा प्रभाव यह होगा कि बाढ़ अधिक आएगी।
- जलवायु परिवर्तन की इन स्थितियों से कृषि उत्पादन में 20–25 प्रतिशत तक की गिरावट आ रही है। इसका प्रभाव छोटे किसानों पर विशेषतः पड़ रहा है और उनकी गरीबी व आजीविका पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है।

प्रश्नः जलवायु परिवर्तन से निपटने हेतु किन मुख्य बातों को ध्यान में रखने की जरूरत है?

उत्तरः ऐसी स्थितियों से निपटने हेतु निम्न दो मुख्य बातों को ध्यान में रखने की जरूरत है–

1. फसलों के अवशेष जलाने, जैव ईंधन का प्रयोग कम करने, गैर–रासायनिक खेती आदि जैसी गतिविधियों पर ध्यान दिया जाना आवश्यक होगा जिससे ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन कम हो।
2. ऐसे उपाय ढूंढने होंगे जिससे इस क्षेत्र की जलवायु परिवर्तन के प्रति अनुकूलन क्षमता बढ़े। इन गतिविधियों को निम्नवत रखा जा सकता है–

- क्षेत्र का पारम्परिक ज्ञान व वैज्ञानिक शोध का सामंजस्य।
- ऐसे वैज्ञानिक शोध जिससे बाढ़ निरोधन प्रजातियों का विकास हो और बाढ़ को झेलने की क्षमता वाली खेती का विकास हो।
- शहरी क्षेत्रों में जल निकासी, ठोस अपशिष्ट प्रबन्धन, सीवर व्यवस्थाएं, पेयजल जैसे विषयों में व्यापक सुधार।
- ग्रामीण क्षेत्रों में आवास, आजीविका व ऐसी पद्धतियों का विकास जिससे बाढ़ से लोग निपट सकें।
- संगठित चेतावनी तंत्र का विकास जिससे बाढ़, सूखा, बीमारियों आदि की पूर्व सूचना मिल सके।

प्रश्नः जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर किस प्रकार के सहयोग की आवश्यकता है?

उत्तरः जलवायु परिवर्तन की चुनौतियों से निपटने के लिए निम्न अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की अपेक्षाएं हैं–

- भारत–नेपाल के बीच में जल आधारित एक समझौता जिससे बाढ़ की चेतावनी का एक तंत्र विकसित किया जा सके।
- जलवायु परिवर्तन से निपटने के लिए सार्क देशों को एक स्वरूप बनाया जाना।
- आवश्यक शोध व प्रसार हेतु संसाधन व धन।
- आवश्यक आधारभूत संरचना व तकनीक हेतु अन्तर्राष्ट्रीय वित्तीय सहायता।
- जल निकासी व जलजमाव स्थितियों से निपटने के लिए वांछित तकनीक व सहायता।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)

ई मेलः jitendraabf@gmail.com

India's No. 1 IAS Training Institution — Alternative Learning Systems

ALS

Training Steel Pillars For The Nation

सामान्य अध्ययन प्रशिक्षण कार्यक्रम हेतु हिन्दी माध्यम का सर्वश्रेष्ठ संस्थान

सबसे अनुभवी टीम • सर्वश्रेष्ठ परिणाम • सर्वश्रेष्ठ पाठ्यक्रम

सामान्य अध्ययन

मुख्य-सह-प्रारंभिक परीक्षा 2012-13 + CSAT

सामान्य अध्ययन के प्रत्येक खंड हेतु विशेषज्ञों की अनुभवी टीम

भारतीय राजव्यवस्था	**मनीष गौतम** (**130+** बैचों को पढ़ाने का अनुभव) एवं **मनोज कुमार सिंह** (ALS Founder Director, इनके निर्देशन में संस्थान से **2000** से अधिक अभ्यर्थियों का चयन)
मैजिक मोमेंट्स एवं निबंध	**शशांक एटम** (ALS Founder Director, **200+** बैचों को प्रशिक्षण देने का अनुभव, इनके निर्देशन में **4000** से अधिक अभ्यर्थियों का चयन)
इतिहास एवं संस्कृति	**वाई डी मिश्रा** (**450+** बैचों को प्रशिक्षण देने का अनुभव प्राप्त, इनके मार्गदर्शन में **3000** से अधिक छात्र चयनित) एवं **मनोज कुमार सिंह**
राष्ट्रीय, अंतर्राष्ट्रीय, भारत एवं विश्व (समसामयिक मुद्दे)	**मनीष गौतम, मनोज कुमार सिंह** एवं **सी.के. सिंह**
भारतीय अर्थव्यवस्था	**अरूणेश सिंह** (**150+** बैचों को प्रशिक्षण देने का अनुभव, अनेक पुस्तकों के लेखक
विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी	**मनीष गौतम, अरविंद सिंह** एवं **संजय पांडे** (इन्हें **130+** बैचों को पढ़ाने का अनुभव)
सांख्यिकी	**अरविंद सिंह** (**150+** बैचों को प्रशिक्षण देने का अनुभव)
भूगोल	**डॉ. शशि शेखर** एवं **बी.एम. पाण्डा**
सामान्य विज्ञान	**शशि शेखर एंव डा. संजय पाण्डे**

बैच प्रारंभ 10 जुलाई, 10 अगस्त एवं 10 सितंबर

CSAT

हिन्दी माध्यम **CSAT की सर्वश्रेष्ठ टीम**

• सामान्य मानसिक योग्यता, तर्क एवं विश्लेषण क्षमता *By* **Arvind Singh** • **English Basic & Comprehension** *By* **David Williams & Sachin Arora** • **आधारभूत आंकिक क्षमता** *By* **Arvind Singh** • **सम्प्रेषण एवं अन्तर्वैयक्तिक क्षमता** *By* **KM Pathi**

बैच प्रारंभ 11 Sept, 11 Oct, 11 Nov & 11 Dec

इतिहास द्वारा वाई.डी. मिश्रा

भूगोल शशांक एटम के निर्देशन में

लोक प्रशासन द्वारा ALS Team

समाज शास्त्र द्वारा ALS Team

बैच प्रारंभ 12 जून एवं 10 जुलाई

Programme Director : **Manoj Kumar Singh**

Managing Director: ALS, Interactions IAS Study Circle, Competition Wizard, ISGS

IAS 2011 Results 23 in top 100, 42 in top 200 — Total selections 201

परीक्षा में अब तक 1215 सफल अभ्यर्थियों का चयन, वर्ष 2011 में कुल चयन = 201*, अब तक 2 IAS TOPPERS का चयन

हिन्दी माध्यम में सर्वोच्च परिणाम

सामान्य अध्ययन (नियमित कक्षा के छात्र)

ALS Top 200 in हिन्दी माध्यम

एवं कई अन्य...

ALS ADMISSION ENQUIRY

9999343999, 9999975666
9810312454, 9810269612
011-27651110, 011-27651700

ALS Alternative Learning Systems

interactions IAS Study Circle — Shaping dreams into success

Be in touch... **Manoj K Singh** *Managing Director, ALS* *E-mail:manojdelhiias@gmail.com*

Alternative Learning Systems (P) Ltd.

Corporate Office: ALS, B-19, ALS House, Commercial Complex, Dr Mukherjee Nagar, Delhi-09. Ph: 27651110, 27651700. *South Delhi Centre:* 62/4, Ber Sarai, Delhi-16 Visit us at: www.iasals.com

पर्यावरण संरक्षण में चिपको आंदोलन की प्रासंगिकता

संतोष कुमार सिंह

चिपको शब्द ''चिपकने'' अथवा ''लिपटने'' से बना है। पेड़ों से चिपककर या लिपटकर उन्हें काटे जाने का विरोध करने की विधि को ''चिपको'' नाम दिया गया, जिससे यह विधि वृक्ष रक्षा में लोकप्रिय हो सके। इसकी लोकप्रियता एवं प्रभावशीलता के कारण ही चिपको ने एक जन-आंदोलन का रूप लिया तथा यह ''चिपको आंदोलन'' के नाम से मशहूर आंदोलन बन गया। वृक्षों से चिपककर सर्वप्रथम अपने प्राणों की आहूति देने की घटना सितम्बर 1730 में राजस्थान के जोधपुर जिले के खेजड़ली (अब खेतड़ी) गांव में घटित हुई।

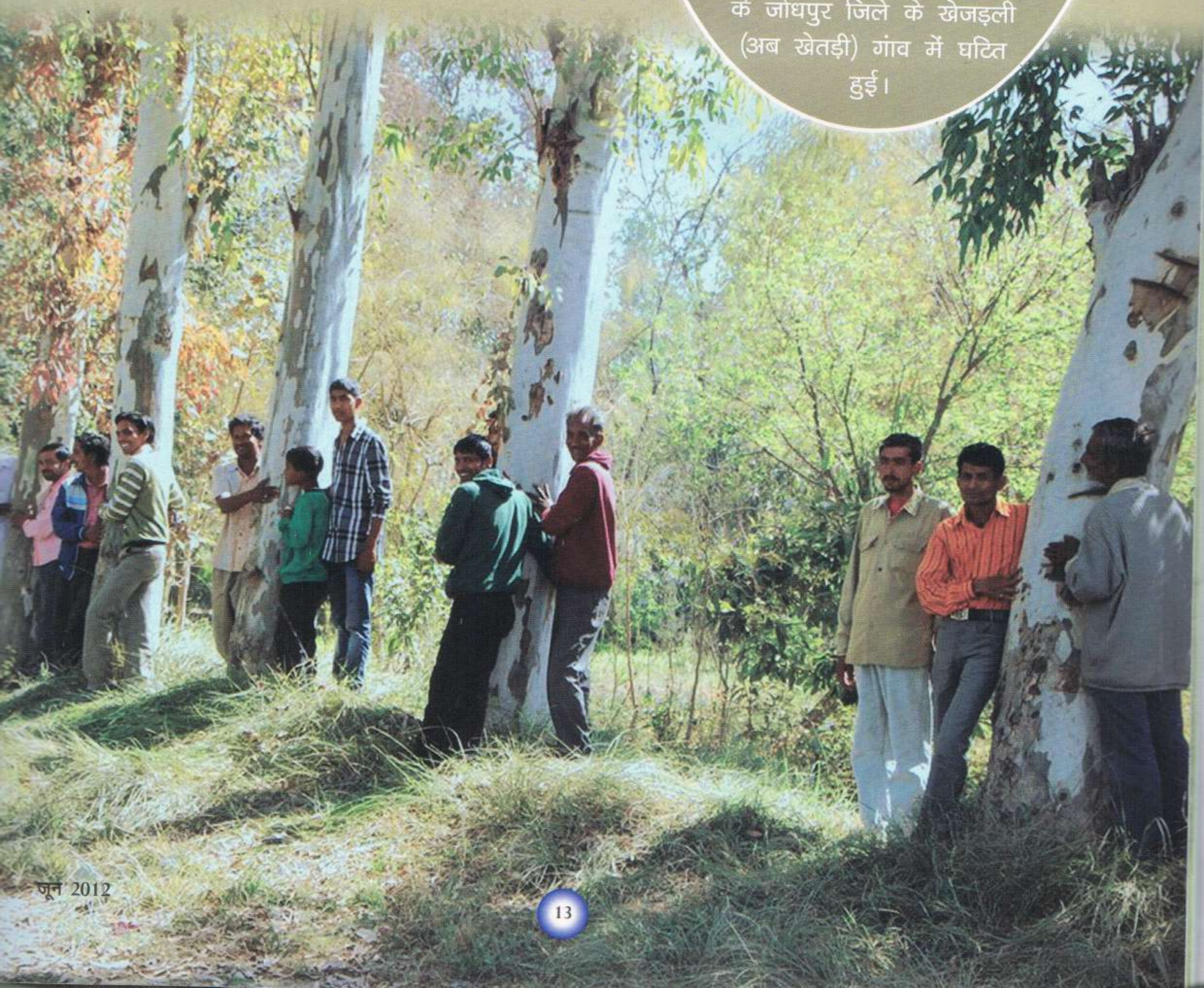

संतुलित विकास प्रकृति और मानव की एकता को ध्यान में रखकर चलता है। ऐसी योजनाएं पर्यावरण सम्बन्धी प्रश्नों के व्यापक मूल्यांकन के आधार पर ही बन सकती हैं। कई ऐसे मामले हैं जिनसे पर्यावरण सम्बन्धी पहलुओं पर सही समय पर सही परामर्श से उनका बेहतर प्रारूप तैयार करने में मदद मिलती है। परिणामस्वरूप पर्यावरण पर पड़ने वाले विपरीत प्रभावों को रोका जा सकता है। इसलिए अपनी योजनाओं और विकास के कार्यों में पर्यावरण का पक्ष सम्मिलित करना आवश्यक है। पर्यावरण की महत्ता इस बात से चरितार्थ होती है कि यह पृथ्वी पर जैविक विकास, संवर्धन और रक्षा के लिए ऐसी दशा का निर्माण करता है जिसके बिना जीवन की कल्पना संभव नहीं है। सरल शब्दों में कहा जा सकता है कि पर्यावरण वह परिवृत्ति है जो मानव को चारों ओर से घेरे हुए है तथा उसके जीवन और क्रियाओं पर प्रभाव डालती है। इस परिवृत्ति या परिस्थिति में मनुष्य से बाहर के तथ्य, वस्तुएं, दशाएं सम्मिलित होती हैं जिनकी क्रियाएं मनुष्य के जीवन विकास को प्रभावित करती हैं।

पर्यावरण के प्रति जागरुकता भारतीय समाज में आदिकाल से रही है। पर्यावरण के तत्त्वों के प्रति हमारी संवेदनशीलता मानवोचित गुण के रूप में देखी जाती रही है। भारतीय मनीषियों ने हजारों वर्ष पूर्व प्राकृतिक व्यवस्था को आत्मसात करने का मार्ग अपनाया, क्योंकि प्रकृति के साथ छेड़छाड़ पूरे जीवमण्डल के लिए खतरा बन सकती थी। पर्यावरण के तत्त्वों–जल, पृथ्वी, वायु, अग्नि, आकाश, वनस्पति आदि के प्रति वेदों में असीम श्रद्ध ा देखी जा सकती है। इसके अलावा पुराण, उपनिषद्, श्रीमदभागवत गीता, रामायण, महाभारत आदि में इस तथ्य के ज्वलंत प्रमाण मिलते हैं कि हमने सदैव प्रकृति की पूजा की है।

पर्यावरण की अनुकूलता और प्रतिकूलता के साथ उसकी सुरक्षा का मूल्यांकन आज की आवश्यकता है। पृथ्वी पर मनुष्यों की बढ़ती जनसंख्या और उसके साथ तीव्र गति से बढ़ती आवश्यकता ने प्रकृति के सहयोग के स्थान पर संघर्ष के लिए उत्साहित किया है। हाल के दशकों में नगरीकरण और औद्योगिकीकरण के नाम पर बिना सोचे–समझे अंधाधुंध काटे गए वनों के कारण भूमि अपरदन, भूस्खलन तथा बाढ़ जैसी समस्याओं का प्रकोप बढ़ गया है। चिपको आंदोलन वनों के विनाश को बचाने की दिशा में एक कदम है जिसका अन्तोत्गत्वा लक्ष्य पर्यावरण को संरक्षण देना है। अतः स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि आज चिपको आंदोलन पर्यावरण संतुलन को बनाए रखने में अहम भूमिका अदा कर रहा है।

भारत में पर्यावरण संरक्षण सम्बन्धी "चिपको आंदोलन" का वर्णन निम्न प्रकार से किया जा सकता है–

खेजड़ली गांव में चिपको आंदोलन

उस समय दिल्ली के मुगल सम्राट औरंगजेब का शासन था तथा राजस्थान में जोधपुर के राजा थे– अजीत सिंह। जोधपुर के राजा अजीत सिंह को आलीशान महल बनाने की इच्छा हुई किंतु जब महल में ईंटों की पकाई हेतु ईंधन की आवश्यकता हुई तो सभी चिंतित हो गए क्योंकि उस मरूभूमि क्षेत्र में वनों का अभाव था। इसी समय किसी ने राजा अजीत सिंह का खेजड़ली गांव के हरे–भरे वनों की ओर ध्यान आकृष्ट कराया। तत्काल खेजड़ली के वनों को काटने के लिए राज्य कर्मचारी अपनी–अपनी कुल्हाड़ियां लेकर रवाना हो गए। वर्षा ऋतु का समय होने से गांव के लगभग सभी पुरुष खेतों में गए हुए थे। जब वे कर्मचारी पेड़ काटने की तैयारी में थे तभी श्रीमती अमृता देवी तथा उनकी तीन पुत्रियों–आसु बाई, रतनी बाई तथा भागु बाई ने पेड़ काटने आए कर्मचारियों से प्रार्थना की कि वे हरे पेड़ न काटे क्योंकि हरे पेड़ काटना धर्म के खिलाफ है।

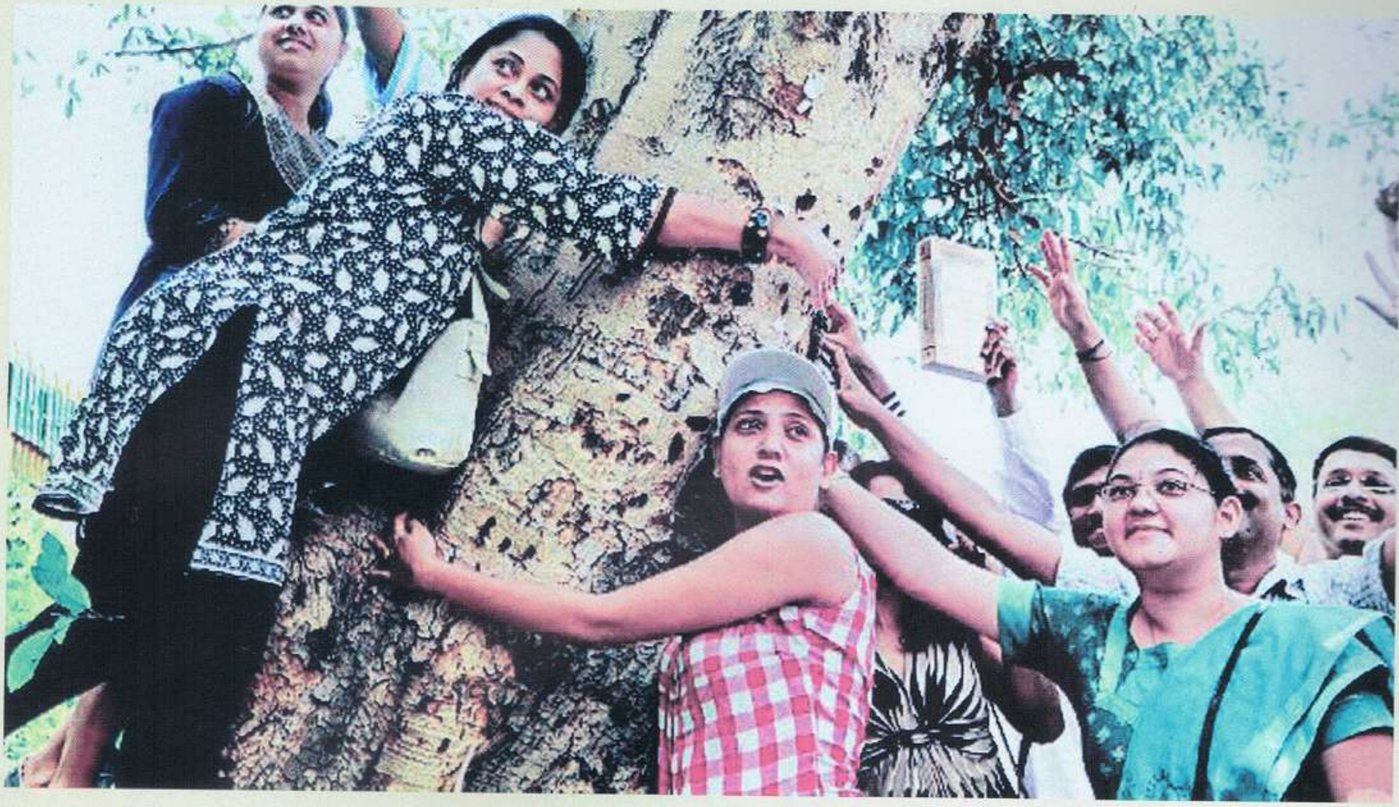

अमृता देवी ने कहा कि–

वाम लिया दाग लगे टुकड़ों देवो न दान

सर साठे रूख रहे तो भी सस्तो जान।

अर्थात् यदि सर कट जाए और पेड़ बच जाए तो यह सस्ता सौदा है। अमृता देवी अपने धर्म की रक्षा के लिए पेड़ से लिपट गई। कुल्हाड़ियों के प्रहार से उसका क्षत–विक्षत शरीर जमीन पर गिर पड़ा। अमृता देवी के पश्चात् उनकी तीन मासूम कन्याएं भी पेड़ से लिपट गई और उनके शीश भी धड़ से अलग कर दिए गए। यह दुःखद समाचार सुनकर ग्रामीण विश्नोई समाज एकत्रित हो गया। उन्होंने हरे वृक्षों के कटाव को रोकने के लिए तथा धर्म की रक्षा के लिए प्राण न्यौछावर करने की शपथ ली। हरे वृक्षों को बचाने के लिए इस स्थान पर कुल 363 व्यक्ति शहीद हुए। मरने वाले सभी विश्नोई जाति के थे। जब यह समाचार जोधपुर राजा ने सुना तो उन्होंने खुद खेजड़ली गांव आकर तत्काल पेड़ों को काटने का आदेश वापस लिया। साथ ही साथ यह भी आदेश दिया कि भविष्य में अब कोई हरा पेड़ नहीं काटा जाना चाहिए।

खेजड़ली के इस महान बलिदान के पीछे राजस्थान में 15वीं सदी में हुए विश्नोई पंथ के प्रवर्तक संत जंभोजी की प्रेरणा काम कर रही थी। जंभोजी ने सदाचार के 29 नियम बनाए जिसमें तीन पर्यावरण और प्रकृति संरक्षण सम्बन्धी बहुत ही महत्वपूर्ण हैं जो निम्न हैं–

- हरे वृक्ष को न काटे।
- सभी जीवों के प्रति दया भाव रखें।
- दुधारू पशुओं की उचित देखभाल करें।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि विश्नाई समाज हमारी सांस्कृतिक धरोहर, सामाजिक मूल्यों व परम्पराओं का संवाहक है। पर्यावरण के प्रति इस समाज का योगदान एवं चेतना अनुकरणीय है।

रैणी गांव में चिपको आंदोलन– चिपको आंदोलन में तहलका मचाने वाली घटना मार्च 1974 में सीमांत जिला चमोली (उत्तराखण्ड) के रैणी गांव में हुई जिसमें पुरुषों की अनुपस्थिति में श्रीमती गौरा देवी के नेतृत्व में चिपको पद्धति को अपनाकर महिलाओं ने रैणी गांव में वनों को भारी विनाश से बचाया।

मार्च 1974 में रैणी गांव के वनों में बहुत बड़ी संख्या में सरकार ने पेड़ों को काटने के लिए छापा मारा। इस कटान की योजना के विरुद्ध श्री चण्डी प्रसाद भट्ट, श्री गोविन्द सिंह रावत व श्रीमती गौरा देवी के नेतृत्व में क्षेत्र के विभिन्न गांवों के महिला मंगल दलों, छात्रों एवं कार्यकर्ताओं ने एकजुटता से वन विनाशकारी कटाव को रोकने का बीड़ा उठाया।

26 मार्च, 1974 के दिन भूमि के मुआवजे के संदर्भ में रैणी गांव के समस्त पुरुष चमोली गए हुए थे। गांव में केवल महिलाएं और बच्चे थे। उसी दिन वन विभाग के कर्मचारियों ने पेड़ काटने

वालों के साथ रैणी गांव पर धावा बोल दिया। ऐसा एक सुनियोजित योजना के तहत किया गया। सन् 1962 में भारत–चीन युद्ध के बाद सरकार ने सैनिक उद्देश्यों के लिए रैणी क्षेत्र की भूमि का अधिग्रहण किया था जिसमें सड़कों के लिए अधिगृहित भूमि भी सम्मिलित थी परन्तु इस भूमि का ग्रामीणों को मुआवजा नहीं दिया गया था। रैणी के वनों के पेड़ों के कटान के लिए नीलामी हो जाने के बाद श्री चण्डी प्रसाद भट्ट ने तकाल ही स्पष्ट कर दिया था कि पेड़ काटने वालों को चिपको आंदोलन का सामना करना पड़ेगा।

एक सप्ताह बाद सरकार की ओर से घोषणा की गई कि 1962 की लड़ाई के दौरान अन्य उपयोग के लिए जो भूमि सरकार ने अधिगृहित की है, उसका मुआवजा चमोली में लोगों को दिया जाएगा। इस घोषणा को सुनकर रैणी गांव के पुरुष चमोली के लिए रवाना होने लगे। महिलाओं को पहले ही शक था कि पुरुषों की अनुपस्थिति का लाभ उठाकर वन विभाग वाले ठेका पाने वाले कंपनी के मजदूरों के साथ पेड़ काटने आ सकते हैं इसलिए वे सतर्क थी कि लोग पेड़ काट सकते हैं।

जैसे ही मजदूर वन विभाग के कर्मचारियों के साथ रैणी गांव की ओर बढ़ रहे थे एक छोटी लड़की ने उन्हें पहचान लिया कि ये पेड़ काटने वाले हैं। वह लड़की भागती हुई गौरा देवी के पास पहुंची और पेड़ काटने वालों की सूचना दी। गौरा देवी ने तुरंत ही 27 महिलाओं के साथ वनों की ओर प्रस्थान किया।

गौरा देवी सहित सभी महिलाओं ने वन विभाग के कर्मचारियों को पेड़ न काटने और वापस जाने की सलाह दी। गौरा देवी ने कहा, "जंगल हमारा मायका है और पेड़ ऋषि हैं। यदि जंगल कटेगा तो हमारे खेत, मकान के साथ मैदान भी नहीं रहेंगे। जंगल बचेगा तो हम बचेंगे। जंगल हमारा रोजगार है।" इतना कहने के बाद भी वन कर्मचारियों पर कोई असर नहीं हुआ। एक वन कर्मचारी बन्दूक तानकर खड़ा हो गया तब गौरा देवी ने कहा कि जंगल काटने से पहले मुझे गोली मारनी होगी। इस आन्दोलन में महिलाओं को काफी संघर्ष करना पड़ा तथा गौरा देवी के नेतृत्व में महिलाएं पेड़ों से चिपक गई। फलतः ठेकेदार के एजेंट को अपने मजदूरों सहित वापस लौटना पड़ा।

रैणी की चिपको की घटना अपने आप में विशेष तरह की थी, क्योंकि इसमें पुरुषों की अनुपस्थिति में महिलाओं ने बड़ी सूझ–बूझ व हिम्मत से कार्य किया और अपनी जान की परवाह किए बगैर पेड़ों से चिपक गईं। इस तरह से रैणी वन के 2451 पेड़ों को काटने से बचाने में वे सफल हो गई।

अप्पिको आंदोलन

कन्नड़ भाषा में चिपको का अर्थ अप्पिको होता है। इस प्रकार अप्पिको आंदोलन चिपको आंदोलन की तर्ज पर ही कर्नाटक के पाण्डुरंग हेगड़े के नेतृत्व में अगस्त, 1993 में शुरू हुआ। इस आंदोलन में भी लोगों ने पेड़ से चिपक कर पेड़ों की रक्षा की है। अतः अप्पिको आंदोलन का मूल उद्देश्य वनारोपण विकास एवं संरक्षण है।

चिपको आंदोलन की प्रासंगिकता

सामाजिक आंदोलन की अवधारणा सामाजिक विकास और प्रगति की अवधारणा से भिन्न है। सामाजिक आंदोलन सामूहिक व्यवहार का स्वरूप है। इसका संचालन समाज एवं संस्कृति में नवीन परिवर्तन लाने के लिए होता है। सामाजिक आंदोलनों का उद्देश्य सामाजिक, धार्मिक,आर्थिक व राजनीतिक क्षेत्रों में आंशिक या अमूल–चूल परिवर्तन लाना हो सकता है। स्वतंत्रता से पहले और पश्चात् अनेक सामाजिक आंदोलनों का जन्म हुआ जिनमें चिपको आंदोलन को भी विशेष स्थान प्राप्त है। इसके पीछे मूल कारण यह है कि इस आंदोलन ने सामाजिक जनचेतना जागृत करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है।

चिपको आंदोलन की मान्यता है कि वनों का संरक्षण और संवर्धन केवल कानून बनाकर

या प्रतिबन्धात्मक आदेशों के द्वारा नहीं किया जा सकता है। वनों के पतन के लिए वन प्रबंधन सम्बन्धी नीतियां ही दोषपूर्ण हैं। गांव की जनता की आवश्यकताओं की ओर पर्याप्त ध्यान नहीं दिया गया। एक ओर सरकारी संरक्षण में वन पदार्थों को ऊंची कीमत पर बेचा जाता रहा है तो दूसरी तरफ वनों के बीच में रहने वाले लोगों की जलाऊ लकड़ी, इमारती लकड़ी, चारा पत्ती जैसी आवश्यकताएं जो कानून से प्राप्त है, आज की सरकारी नीतियों द्वारा छीन ली गई हैं।

पर्यावरण संरक्षण से जुड़े आंदोलन में भी महिलाओं ने अपनी महत्ती भूमिका का निर्वहन किया है। इतिहास साक्षी है कि प्राचीन समय में पर्यावरण संरक्षण से सम्बन्धित प्रयास महिलाओं की पहल से ही प्रारम्भ हुए हैं। 18वीं शताब्दी के प्रारम्भ में जोधपुर नरेश के कर्मचारियों द्वारा खेजड़ली गांव में पेड़ों की कटाई प्रारम्भ की गई। श्रीमती अनिता देवी ने अपना बलिदान देकर वृक्षों की रक्षा की, जो अपने आप में प्रेरणास्रोत है।

सन् 1974 में उत्तराखण्ड में रैणी गांव में पुरुषों की अनुपस्थिति में श्रीमती गौरा देवी ने वृक्षों को बचाने के लिए घर–घर जाकर महिलाओं को एकत्रित किया और चिपको तकनीक से वृक्षों को बचाया।

इस प्रकार चिपको आंदोलन ने ग्रामीण महिलाओं में न केवल पर्यावरण संरक्षण की चेतना विकसित की है बल्कि व्यवस्था में भागीदारी के लिए नेतृत्व का विकास भी किया है। अब वन पंचायतों पर महिलाओं का भी कब्जा होने लगा है। आज के वनों के संरक्षण में सबसे अगली कतार में स्वयं स्फूर्त इच्छा से खड़ी हैं। इतना ही नहीं महिलाएं राजनीतिक कार्यों एवं पदों पर भी बराबर नजर रखती हैं। विकास क्षेत्रों में भी वे उच्च राजनीतिक पदों पर विराजमान हैं।

वनों के महत्व को ध्यान में रखते हुए चिपको आंदोलन के मुख्य उद्देश्य रहे हैं–

- आर्थिक स्वावलम्बन के लिए वनों का व्यापारिक दोहन बंद किया जाए।
- प्राकृतिक संतुलन के लिए वृक्षारोपण के कार्यों को गति दी जाए।
- चिपको आंदोलन की स्थापना के पश्चात् चिपको आंदोलनकारियों द्वारा एक नारा दिया गया –

  क्या है जंगल के उपचार मिट्टी, पानी और बयार,

  मिट्टी, पानी और बयार, जिन्दा रहने के आधार।

चिपको आंदोलन प्रारम्भ में त्वरित आर्थिक लाभ का विरोध करने का एक सामान्य आंदोलन था किन्तु बाद में इसे पर्यावरण सुरक्षा का तथा स्थाई अर्थव्यवस्था का एक अभिनव आंदोलन बना दिया। चिपको आंदोलन से पूर्व वनों का महत्व मुख्य रूप से वाणिज्यिक था। व्यापारिक दृष्टि से ही वनों का बड़े पैमाने पर दोहन किया जाता था। चिपको आंदोलनकारियों द्वारा वनों के पर्यावरणीय महत्व की जानकारी सामान्य जन तक पहुंचाई जाने लगी। इस आंदोलन की धारणा के अनुसार वनों की पर्यावरणीय उपज है–ईंधन ,चारा, खाद, फल और रेशा। इसके अतिरिक्त मिट्टी तथा जल वनों की दो प्रमुख पर्यावरणीय उपज हैं और यही मनुष्य के जिन्दा रहने का आधार हैं।

चिपको आंदोलन की मान्यता है कि वनों के संरक्षण के लिए लोकशिक्षण को आधार बनाया जाए जिससे और अधिक व्यापक स्तर पर जनमानस को जागरूक किया जा सके। योजना की सफलता के लिए यह तथ्य भुलाया नहीं जा सकता है कि लोगों को जोड़े बिना वन संरक्षण की कल्पना ही व्यर्थ है। इस प्रकार, चिपको आंदोलन में पेड़ों की रक्षा के लिए सुदृढ़ आधार, वन संसाधनों का वैज्ञानिक तरीके से उपयोग, समुचित संरक्षण और वृक्षारोपण आदि के लिए कार्य किए गए। यह आंदोलन अब केवल पेड़ों से चिपकने तथा उनको बचाने का आंदोलन ही नहीं रह गया है बल्कि यह एक ऐसा आंदोलन बन गया है जो वनों की स्थिति के प्रति जागृति पैदा करने, सम्पूर्ण वन प्रबन्ध को एक स्वरूप प्रदान करने और जंगलों एवं वनवासियों की समृद्धि के साथ ही धरती की समृद्धि वाला आंदोलन बन गया है।

निष्कर्ष

पर्यावरण संरक्षण में चिपको आंदोलन द्वारा किए गए कार्यों का कभी भी विस्मय नहीं किया जा सकता है। पेड़ न काटने देने से एक छोटी–सी सोच से शुरू हुई चिपको की यात्रा वनों की उपयोगिता ,युक्तियुक्त उपयोग, वन और जन का अंर्तसम्बन्ध, वन व्यवस्थाओं में महिलाओं की भागीदारी, परिस्थितिकी और पर्यावरण के वृहत्तर संदर्भो के छोर छूने में सफल रही हैं और पेड़ बचाने का छोटा–सा दिखने वाला उपक्रम पर्यावरण संरक्षण का व्यापक अभियान बन गया है। साथ ही साथ यह भी कहना होगा कि अब यह आंदोलन कम अभियाननुमा कार्यक्रम अधिक हो गया है और लड़ने की नहीं बल्कि करने की सीख देने लगा है। चिपको आंदोलन यह संदेश देता है कि वनों से हमारा गहरा रिश्ता है। वन हमारे वर्तमान और भविष्य के संरक्षक हैं। यदि वनों का अस्तित्व नहीं होगा तो हमारा अस्तित्व भी समाप्त हो जाएगा। मनुष्य का यह अधिकार है कि वह अपनी बुनियादी जरूरतों को पूरा करने के लिए प्राकृतिक साधनों का भरपूर उपयोग करे लेकिन इस निर्ममता के साथ नहीं कि प्राकृतिक संतुलन ही बिगड़ जाए। चिपको आंदोलन के निरन्तर प्रयास के कारण संपूर्ण देश में अब लोग यह समझने और स्वीकार करने लगे हैं कि अगर उन्हें अपनी खोई हुई खुशहाली को फिर से लौटाना है तो उसके लिए उन्हें वनरहित भूमि को पुनः हरी परत से ढकना होगा। अतः यह आंदोलन आज देश के सीमा पार अनेक देशों के लिए जनजागरण का सूत्र बना हुआ है।

(लेखक श्री अ.प्र.ब.राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय अगस्त्यमुनि, रुद्रप्रयाग (उत्तराखण्ड) के राजनीति विज्ञान विभाग में प्रवक्ता हैं।)

सदस्यता कूपन

मैं/हम कुरुक्षेत्र का नियमित ग्राहक बनना चाहता हूं/चाहती हूं/चाहते हैं।

शुल्क : एक वर्ष के लिए 100 रुपये, दो वर्ष के लिए 180 रुपये, तीन वर्ष के लिए 250 रुपये का

(जो लागू नहीं होता, उसे कृपया काट दें)

डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर क्रमांक .... दिनांक .... संलग्न है।

कृपया ध्यान रखें, आपका डिमांड ड्राफ्ट/भारतीय पोस्टल आर्डर निदेशक, प्रकाशन विभाग को नई दिल्ली में देय हो।

नाम (स्पष्ट अक्षरों में) ....

पता ....

.... पिन ....

इस कूपन को काटिए और शुल्क सहित इस पते पर भेजिए :

विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक

प्रकाशन विभाग, पूर्वी खंड–4, तल–7, रामकृष्णपुरम,
नई दिल्ली–110 066

बदलते पर्यावरण का खेती पर प्रभाव

डॉ. पारस जैन एवं कविता दवे

जलवायु परिवर्तन की चुनौती भले ही रोजमर्रा की आजीविका के संघर्ष एवं व्यस्त दिनचर्या में लगे लोगों के लिए महज खबर या अकादमिक विषय सामग्री मात्र ही हो, सच्चाई तो यह है कि हवा, पानी वाली इस समस्या से देर-सवेर, कम-ज्यादा हम सभी का जीवन प्रभावित होता है। भारत में जलवायु परिवर्तन के एक प्रभाव के रूप में बाढ़ व सूखे को देखा जा सकता है। देश का बहुत बड़ा क्षेत्र बाढ़ की विभीषिका को झेलता आ रहा है। वहीं दूसरी ओर तापमान वृद्धि एवं वाष्पीकरण की दर तीव्र होने के परिणामस्वरूप सूखाग्रस्त क्षेत्र बढ़ता जा रहा है। जहां एक ओर जलवायु परिवर्तन कृषि से प्रभावित होता है वहीं दूसरी ओर जलवायु परिवर्तन भी कृषि को प्रभावित करता है जो दुनिया में मानव द्वारा प्रेरित ग्रीनहाउस गैस में 13.5 प्रतिशत के योगदान से प्रभावित हुआ है।

21वीं शताब्दी प्रमुख चुनौतियों के मार्ग पर तेजी से वृद्धि कर रही है। इनमें जनसंख्या वृद्धि, कृषि, भूमि व अन्य प्राकृतिक संसाधनो में गिरावट सम्मिलित है और इन सब के अतिरिक्त ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन पर्यावरण परिवर्तन में सबसे अधिक योगदान कर रहा है। औद्योगीकरण व मशीनीकरण की दुनिया में यह सबसे बड़ी चुनौती माना जा रहा है।

पृथ्वी का वातावरण एक नाजुक मोड़ पर पहुंच चुका है। इसका बदलता हुआ रूख पृथ्वी के विनाश का कारण बन सकता है। इस संदर्भ में दुनिया के लगभग सभी वैज्ञानिक चिंतित हैं। वायुमण्डल में ग्रीनहाउस गैसों का उत्सर्जन पृथ्वी की हरियाली के लिए–वनों, कृषि तथा सामान्यतया पूरे जीवन के लिए एक भारी खतरा है।

यह एक भारी विसंगति है किन्तु वैज्ञानिक तौर पर इन दोनों के बीच में अन्योन्याश्रित सम्बन्ध दिखाई देता है। यदि ठीक परिमाण में हो तो कार्बन–डाई–ऑक्साइड, मीथेन, नाइट्रस ऑक्साइड, सल्फर–डाई–ऑक्साइड आदि ग्रीनहाउस गैसों की उपस्थिति जीवन और जलवायु की स्थिरता के लिए आवश्यक है। जब ये ग्रीनहाउस गैस अधिक मात्रा में एकत्रित हो जाती हैं तो पृथ्वी गर्म हो जाती है। इससे जलवायु में बदलाव आ जाता है। इन गैसों का वायुमण्डल में अनुचित मात्रा में एकत्र हो जाना ही समस्या की जड़ है।

जलवायु परिवर्तन के प्रमुख कारक कार्बन–डाई–आक्साइड की अधिक मात्रा से गरमाती धरती का कहर बढ़ते तापमान से अब दृष्टिगोचर होने लगा है। वातावरण में कार्बन–डाई–ऑक्साइड की मात्रा में निरन्तर वृद्धि हो रही है। लगभग 18,000 वर्ष पूर्व हिमनदकाल से अन्तर्हिमनद काल तक के संक्रमण के दौर में कार्बन–डाई–ऑक्साइड के एकत्रीकरण में लगभग 4 डिग्री सेल्सियस की वृद्धि हुई। औद्योगिक क्रान्ति के बाद से उपजे ग्रीनहाउस प्रभाव में कार्बन–डाई–ऑक्साइड की हिस्सेदारी 60 प्रतिशत से ज्यादा है। औद्योगिक क्रान्ति से पहले वायुमण्डल में कार्बन–डाई–ऑक्साइड की मात्रा 280 पी.पी.एम थी जोकि 1990 में बढ़कर 353 पी.पी.एम. हो गई।

संयुक्त राष्ट्र पर्यावरण कार्यक्रम की एक विज्ञप्ति के अनुसार लगभग 5.7 लाख टन कार्बन–डाई–ऑक्साइड वायुमण्डल में घुलकर उसे जहरीला बना रही है।

वातावरण में कार्बन–डाई–ऑक्साइड में वृद्धि के कई कारण हैं। तेल, कोयला आदि का उपयोग तथा वनों की अति कटाई आदि प्रमुख कारण हैं। आई.पी.पी.सी. की रिपोर्ट में बताया गया है कि हमारी करतूतों के कारण प्रत्येक वर्ष वातावरण में 380 करोड़ टन कार्बन–डाई–ऑक्साइड गैस घुलती है। यह स्थिति तब है जबकि पेड़–पौधे और समुद्र अपनी क्षमता पर कार्बन–डाई–ऑक्साइड गैस सोख लेते हैं। इस तरह वातावरण में आज भी लगभग 1/2 प्रतिशत कार्बन–डाई–ऑक्साइड गैस बढ़ रही है। इसी प्रकार प्रतिवर्ष लगभग 52.5 करोड़ टन मीथेन गैस हवा में पहुंचती है। मीथेन गैस वृद्धि दर प्रतिशत लगभग 0.9 प्रतिशत आंका गया है। ग्रीन हाउस गैसों में एक अन्य प्रमुख गैस नाइट्रस आक्साइड है। नाइट्रस आक्साइड गैस वातावरण में लगभग 0.25 प्रतिशत की दर से बढ़ रही है।

इनके अतिरिक्त ओजोन परत को नष्ट करने वाली प्रमुख सी.एफ.सी. गैस परोक्ष रूप से ग्रीनहाउस प्रभाव पर भी हस्तक्षेप करती है। ये गैसें स्थान, ऊंचाई तथा मौसम के अनुसार ग्रीनहाउस प्रभाव को घटाती और बढ़ाती हैं।

विश्व में बिगड़ते हुए पर्यावरण सन्तुलन एवं प्रदूषण के कारण पृथ्वी के तापमान में निरन्तर वृद्धि हो रही है जोकि जीवधारियों, वृक्षों एवं मानव जाति के लिए खतरा बन गई है, इसे ही ग्लोबल वार्मिंग कहते हैं।

पृथ्वी पर जीवन को विकसित करने और इसे फलने–फूलने के लिए अनुकूल वातावरण उपलब्ध कराने का काम वायुमण्डल करता है। हमारे वायुमण्डल में जो ग्रीनहाउस गैसें विद्यमान हैं वो धरती से परावर्तित सूर्य की किरणों के कुछ अंश को सोखकर पृथ्वी को गर्म रखती हैं। जलवायु परिवर्तन में 80 प्रतिशत योगदान कार्बन–डाई–ऑक्साइड का है।

वर्तमान मे ग्रीनहाउस गैसों के बढ़ जाने के कारण यह प्राकृतिक चक्र गड़बड़ा गया है। यद्यपि समस्त पृथ्वी के वातावरण में परिवर्तन होना एक प्राकृतिक घटना है किन्तु पिछले कुछ दशकों से पृथ्वी का वातावरण अत्यधिक असंतुलित हुआ है। इस परिवर्तन के लिए मानवजनित कारण जैसे औद्योगीकरण, यातायात के साधनों का विकास, वन विनाश आदि जिम्मेदार हैं व मोटे तौर पर ऊर्जा व परिवहन के लिए भूमि के उपयोग व मनुष्य के खाद्यान्न की पूर्ति के लिए ईंधन के जलने के परिणामस्वरूप हुई है।

इसी सन्दर्भ में संयुक्त राष्ट्र के महासचिव ने कहा है कि "जलवायु परिवर्तन हमारे समय का प्रमुख पर्यावरणीय मुद्दा है और पर्यावरण नियामकों को सबसे बड़ी चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। इसके साथ आर्थिक, स्वास्थ्य, खाद्य उत्पादन, सुरक्षा व अन्य आयाम सम्बन्धी संकट बढ़ रहे हैं।"

ग्लोबल वार्मिंग आज एक जटिल समस्या बन गई है। जलवायु एवं मौसम में अप्रत्याशित बदलाव, कहीं अत्यधिक बाढ़, कहीं व्यापक सूखा, आंधी–तूफान आदि बढ़ रहे खतरे इस समस्या की ओर हमारा ध्यान आकर्षित कर रहे हैं। ये गतिविधियां जहां एक ओर पराबैंगनी किरणों से धरती को बचाने वाली ओजोन परत के छीजने का कारण बनी हुई हैं वहीं दूसरी ओर धरती में मरुस्थलीकरण की राह को भी आसान कर रही हैं।

कृषि उत्पादकता में वृद्धि की आवश्यकता भविष्य में बढ़ती हुई जनसंख्या की पूर्ति हेतु आवश्यक होगी व कृषि स्वयं जलवायु परिवर्तन व देश के संसाधनों पर निर्भर है। जलवायु परिवर्तन के कृषि पर सकारात्मक व नकारात्मक दोनों प्रकार के प्रभाव हो सकते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय चैरिटी की नई रिपोर्ट के अनुसार पर्यावरण में बदलाव गरीबी और विकास से जुड़े हर मुद्दे पर प्रभाव डाल रहा है।

इटली में जी–आठ देशों के सम्मेलन से पहले ऑक्सफैम ने धनी देशों के नेताओं से अपील की है कि वो कार्बन उत्सर्जन में कमी करें और गरीब देशों की मदद के लिए 150 अरब डॉलर की राशि की व्यवस्था करे। ऑक्सफैम का कहना है जलवायु परिवर्तन के कारण एशिया, अफ्रीका और लेटिन अमरीकी देशों में गरीब लोग और गरीब होते जा रहे हैं। इन देशों में किसानों ने ऑक्सफैम से कहा है कि बरसात का मौसम बदल रहा है जिससे उनको खेती में दिक्कतें हो रही हैं।

किसान कई पीढ़ियों से खेती के लिए मौसमी बरसात पर ही निर्भर रहे हैं लेकिन अब बदलते मौसम के कारण उन्हें नुकसान हो रहा है। रिपोर्ट के अनुसार भारत और अफ्रीकी देशों में बारिश के मौसम में बदलाव के कारण अगले दस वर्षों में मक्के के उत्पादन में 15 प्रतिशत की गिरावट आ सकती है। देश में फसल उत्पादन में उतार–चढ़ाव का कारण कम वर्षा, अत्यधिक वर्षा, अत्यधिक नमी, फसलों पर कीड़े लगना आदि मुख्य हैं।

इस प्रकार जलवायु परिवर्तन के कई ऐसे कारक हैं जो कृषि को सीधे प्रभावित करते हैं:–

- ❖ औसत तापमान में वृद्धि
- ❖ वर्षा की मात्रा व तरीकों में परिवर्तन
- ❖ कार्बन–डाई–ऑक्साइड में वृद्धि से वातावरण में नमी
- ❖ जहरीली गैसों का प्रभाव
- ❖ ओजोन परत में कमी।

औसत तापमान में वृद्धि– पिछले कई दशकों में तापमान में काफी वृद्धि हुई है। औद्योगीकरण के प्रारम्भ से अर्थात 1780 से लेकर अब तक पृथ्वी के तापमान में 0.7 सेल्सियस वृद्धि हो चुकी है। कुछ पौधे ऐसे होते हैं जिन्हें एक विशेष तापमान की आवश्यकता होती है, वायुमण्डल का तापमान बढ़ने से उनके उत्पादन पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है तथा उत्पादन में भारी कमी आती है। उदाहरण के लिए आज जहां गेहूं ,जौ, सरसो और आलू की खेती हो रही है तापमान बढ़ने से इन फसलों की खेती न हो सकेगी, क्योंकि इन फसलों को ठंडक की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार जलवायु परिवर्तन होने से स्थानीय जैव विविधता में परिवर्तन उनके क्षरण का कारण हो सकता है। अधिक तापमान बढ़ने से मक्का, धान या ज्वार आदि फसलों का क्षरण हो सकता है क्योंकि इन फसलों में अधिक तापमान के कारण दाना नहीं बनता है अथवा कम बनता है। इससे इन फसलों की खेती करना असंभव हो सकता है। इसके अतिरिक्त तापमान वृद्धि से वर्षा में कमी होती है जिससे मिट्टी में नमी

समाप्त हो जाती है। भूमि में निरन्तर तापमान में कमी व वृद्धि से अपक्षय की क्रियाएं प्रारम्भ हो जाती हैं। इस प्रक्रिया के द्वारा भूमि टूट–टूट कर उसके कण एक–दूसरे से अलग हो जाते हैं। इसी के साथ तापमान वृद्धि से गम्भीर सूखे की संभावना में भी वृद्धि हुई है।

वर्षा की मात्रा व तरीकों में परिवर्तन – वर्षा की मात्रा व तरीकों में परिवर्तन से मृदाक्षरण और मिट्टी की नमी पर प्रभाव पड़ता है। वर्षा का कृषि पर महत्वपूर्ण रूप से प्रभाव पड़ता है। सभी पौधों को जीवित रहने के लिए कम से कम पानी की भी आवश्यकता रहती है। इसी कारण वर्षा कृषि क्षेत्र के लिए महत्वपूर्ण है और इसके अन्तर्गत भी नियमित रूप से हुई वर्षा का महत्व अधिक है। बहुत अधिक या बहुत कम वर्षा भी फसलों के लिए हानिकारक सिद्ध होती है। सूखा कटाव में वृद्धि करता है व फसलों को क्षति पहुंचा सकता है जबकि अत्यधिक वर्षा से भी हानिकारक कवक में वृद्धि हो सकती है तथा भूक्षरण की समस्या उत्पन्न होती है। हमारे देश में सामान्यतः कृषि भूमि से क्षरण की दर लगभग 7–5 टन प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष है परन्तु वर्तमान दर लगभग 20–30 टन प्रति हेक्टेयर प्रति वर्ष तक पहुंच गयी है जोकि एक गम्भीर चिन्ता का विषय बना हुआ है।

कार्बन–डाई–ऑक्साइड में वृद्धि से वातावरण में नमी – कार्बन–डाई–ऑक्साइड की मात्रा बढ़ने से व तापमान में वृद्धि से पेड़–पौधों तथा कृषि पर भी इसका विपरीत प्रभाव पड़ेगा। यह परिवर्तन कुछ क्षेत्रों के लिए लाभदायक हो सकता है तो कुछ क्षेत्रों के लिए नुकसानदायक। भारतीय वानिकी अनुसंधान एवं शिक्षा परिषद् के महानिदेशक डॉ. डी. एन. तिवारी ने संभावित मौसमी बदलाव के नुकसानों को रेखांकित करते हुए बतलाया कि सूखे और आग के कारण बहुत–सी उपयोगी जातियां नष्ट हो जाएंगी तथा उनकी जगह नुकसानदेह जातियां पनपेगी। तेजी से बढ़ने वाले पेड़ों की वृद्धि कीड़ों के प्रकोप से प्रभावित होगी। चारागाहों में बढ़िया घास की पैदावार गिर जाएगी किन्तु इससे खेती को फायदा हो सकता है क्योंकि कार्बन–डाई–ऑक्साइड पौधों की बढ़वार को तेज करती है किन्तु दूसरी ओर मिट्टी खराब होने से खेती भी खराब हो सकती है।

जहरीली गैसों का प्रभाव – वर्तमान समय में वायुमण्डल में सल्फर ऑक्साइड की 60 प्रतिशत की मात्रा व नाइट्रोजन आक्साइड की 50 प्रतिशत मात्रा उत्पन्न होती है। वातावरण की नमी के सम्पर्क मे आने से ये गैसें क्रमशः गंधक, अम्ल और नाइट्रिक अम्ल बनाती हैं जोकि वर्षा के रूप में पृथ्वी पर गिरता है। यह क्रिया अम्लीकरण कहलाती है। अम्लीय वर्षा का जल

जब धरातलीय सतह पर पहुंचता है तो मिट्टी अम्लीय हो जाती है। मिट्टी के अन्दर स्थित सूक्ष्म जीव–जन्तुओं, जीवाणुओं, कवकों आदि को भी अम्ल की विषाक्तता नष्ट कर देती है जिनका कि पौधों की वृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान होता है। अम्लीयता के कारण धरती की ऊपरी सतह अर्थात् मिट्टी के पोषक तत्व भी नष्ट हो जाते हैं। इससे मिट्टी की गुणवत्ता कम हो जाती है जिससे कृषि उत्पादन पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

ओजोन परत में कमी – ग्रीनहाउस गैसों के उत्सर्जन का ओजोन परत पर विनाशकारी प्रभाव पड़ रहा है। ग्रीनहाउस गैसों के कारण ओजोन छतरी छिपती जा रही है। ओजोन परत के मात्र 1 प्रतिशत की छीजन से पराबैंगनी किरणों की मात्रा में 2 प्रतिशत की बढ़ोतरी और उसी अनुपात में इंसानी जीवन तथा खाद्य पदार्थों के उत्पादन पर भी विनाशकारी प्रभाव पड़ता है।

(ओजोन परत में कमी)		(ग्रीनहाउस गैसों में वृद्धि)
पराबैंगनी स्तर में वृद्धि	**गर्म जलवायु**	**कार्बन के स्तर में वृद्धि**
अधिक त्वचा कैंसर, रोग प्रतिरोधी क्षमता में कमी, फसल में कमी , समुद्री पारिस्थितिकी में परिवर्तन	फसलों में परिवर्तन, रेगिस्तान में वृद्धि, घास–रहित वन, सीमांत कृषि को खतरा	पौधों की लम्बाई में वृद्धि, कुल पैदावार में वृद्धि, खरपतवार में वृद्धि, मृदा अपक्षय

इस प्रकार जलवायु परिवर्तन के यह सभी कारक कृषि पर प्रत्यक्ष प्रभाव डालते है व अप्रत्यक्ष रुप से कृषकों की आर्थिक स्थिति, उत्पादन व उत्पादकता आदि पर भी प्रभाव डालते हैं। अतः इस विषय में गम्भीर रूप से विचार किया जाना आवश्यक है।

हमारे एवं हमारी भावी पीढ़ियों के जीवन को निर्णायक रूप से प्रभावित करने वाली जलवायु परिवर्तन की समस्या हम सब के लिए चुनौती है। इसका सामना सार्थक एवं प्रभावशाली ढंग से करने के लिए हमें जागरुकता दिखाते हुए सरकारी, अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर अपने लोकतांत्रिक अधिकारों का उपयोग करना होगा। व्यक्तिगत जीवन में भी हम सादगी लाने और बिजली, पानी, ईंधन की बचत की दिशा में कदम उठा सकते हैं। भारत वातावरणीय परिवर्तनों से होने वाली स्थितियों पर नियंत्रण से संबंधित योजनाओं पर सकल घरेलू उत्पाद का करीब 2.5 प्रतिशत खर्च करता है जोकि एक विकासशील देश के लिए काफी बड़ी राशि है। चूंकि जलवायु परिवर्तन किसी एक देश अथवा क्षेत्र तक सीमित नहीं है इसलिए इनमें कमी लाने हेतु सभी स्तरों पर ठोस उपायों की जरूरत है। यह कहना अतिश्योक्ति नहीं होगी कि जलवायु परिवर्तन न केवल कृषि के लिए बल्कि संपूर्ण मानव सभ्यता के लिए एक खतरे के रूप में सामने आया है। कोई भी देश इसकी आंच से बच नहीं सकता। वर्जिन ग्रुप के प्रमुख रिचर्ड ब्रेनसम ने हाल ही में उस व्यक्ति को 2.5 करोड़ ड़ॉलर का पुरस्कार देने की घोषणा की है जो ग्रीनहाउस गैसों के एक बड़े उपाय सुझा सके। कहना न होगा कि ग्लोबल वार्मिंग अब केवल बौद्धिक विलास का विषय न रहकर एक हकीकत है, एक कड़वी हकीकत। सवाल यह है कि हम इस हकीक्त से दूर भागते हैं या इसका सामना करते हैं।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं।)
ई–मेलः shubhkavi15@yahoo.com

पाठकों / लेखकों से अनुरोध

आप "कुरुक्षेत्र" पत्रिका के नियमित पाठक/लेखक हैं तो आप जरूर चाहेंगे कि आपके गांव या उसके आसपास आ रहे बदलाव के बारे में सभी लोगों को पता चले। आपके गांव या आसपास जरूर ऐसी कोई महिला/पुरुष या स्वयंसेवी संस्था होगी जिसके बूते पर बदलाव की ब्यार चली हो। सरकारी प्रयासों के चलते भी आपके गांव का कुछ कायापलट तो हुआ ही होगा।

अगर आपके पास ऐसी कोई भी जानकारी है तो आप उसे अपने शब्दों में लिखकर (फोटो सहित) भेजें। लेख छपने पर उसका उचित पारिश्रमिक भी दिया जाएगा। रचना दो प्रतियों में टाइप की हुई हो (kruti dev font 010) और उसके साथ ई–मेल तथा मौलिकता का प्रमाण पत्र संलग्न हो। हमारा पता है – वरिष्ठ संपादक, कुरूक्षेत्र (हिंदी), कमरा नं. 655, 'ए' विंग, निर्माण भवन, ग्रामीण विकास मंत्रालय, नई दिल्ली–110001, आप हमें लेख ई–मेल भी कर सकते हैं।
ई–मेल : kuru.hindi@gmail.com

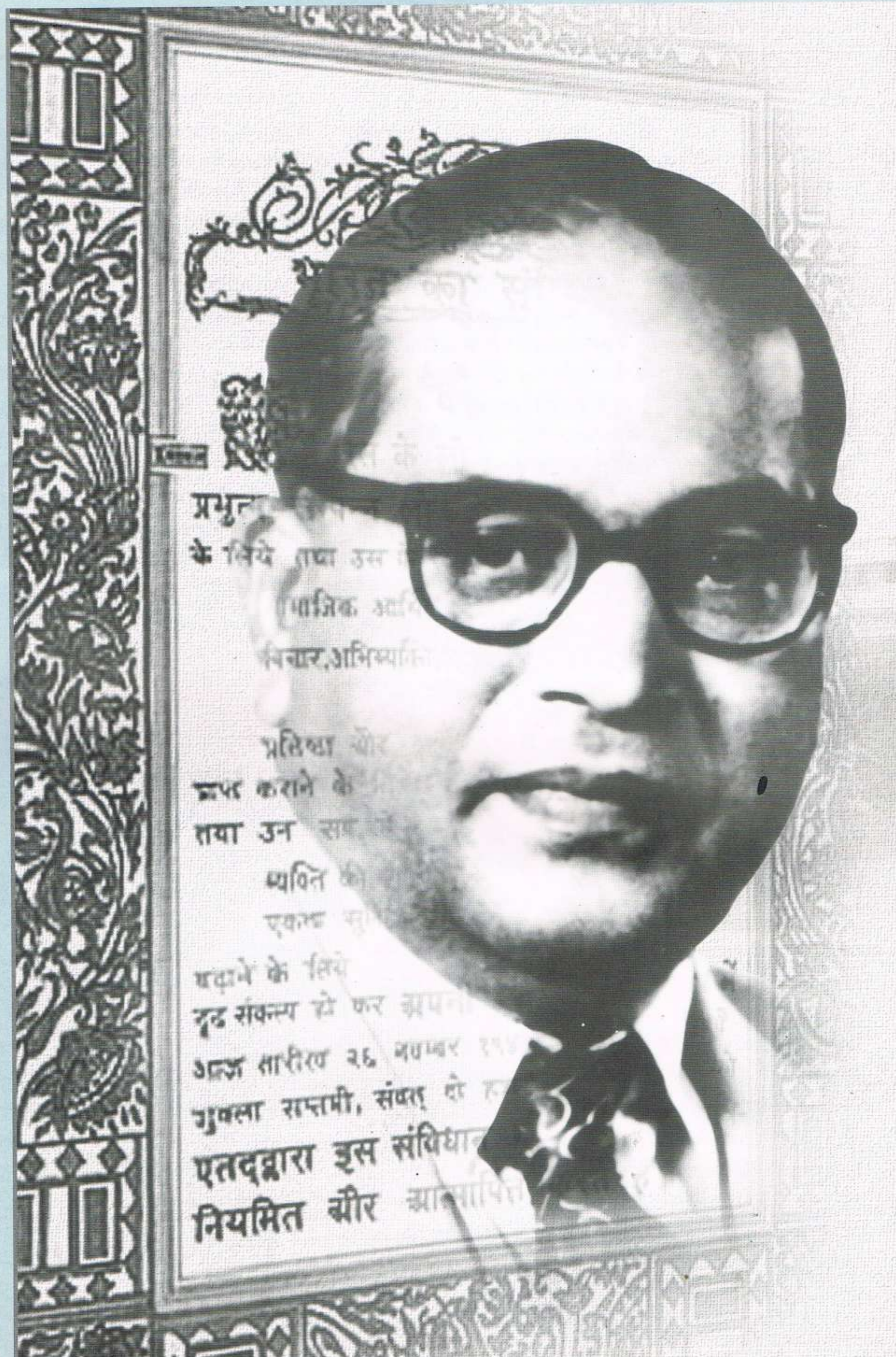

KH-40/2012

"संवैधानिक तरीकों पर मज़बूती से
डटे रह कर ही हमें अपने सामाजिक और
आर्थिक उद्देश्यों को हासिल करना होगा।"

ाबासाहेब डॉ. भीमराव अम्बेडकर

25 नवम्बर 1949 को संविधान सभा को संबोधित करते हुए

14 अप्रैल
अम्बेडकर जयन्ती

ना और प्रसारण मंत्रालय   सत्यमेव जयते   सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय

भारत सरकार

davp 22202/13/0003/1213

पर्यावरण संरक्षण में ग्रामीण महिलाओं का योगदान

डॉ. अनीता मोदी

ग्रामीण महिलाओं ने विविध आंदोलन व कार्यक्रमों के माध्यम से पर्यावरण प्रदूषण की रोकथाम हेतु सतत प्रयास किए हैं। ज्ञातव्य है कि लगभग तीन सौ वर्ष पूर्व राजस्थान के एक राजा ने चूना बनाने के लिए अपने रजवाड़े के पेड़ों को कटवाने का आदेश दिया। उल्लेखनीय है कि अमृता देवी नामक विश्नोई महिला के नेतृत्व में अनेक महिलाएं इन वृक्षों के चिपक गईं ताकि इनकी कटाई को रोका जा सकें। पर्यावरणविद् वंदना शिवा ने वृक्षों की कटाई को रोकने के लिए 'चिपको आंदोलन' के माध्यम से बड़ी संख्या में महिलाओं को प्रेरित एवं प्रोत्साहित किया। उत्तराखण्ड में उत्तरकाशी जिले की महिलाओं ने 'चिपको आंदोलन' की तर्ज पर 'रक्षा सूत्र आंदोलन' की नींव रखी। इस आंदोलन में महिलाएं पेड़ों पर रक्षा (धागा) बांध कर बहन-भाई के रिश्ते को यथार्थ रुप प्रदान कर रही हैं। वर्तमान में इस आंदोलन का सूत्रपात सम्पूर्ण देश में हो चुका है जो पर्यावरण संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है।

"यदि विश्व को संभावित प्रलयकारी पर्यावरणीय परिस्थितियों से बचाना है, तो तत्काल आवश्यकता है कि विश्व के विकसित देश कार्बन उत्सर्जन में त्वरित कटौती करें एवं विकासशील अर्थव्यवस्थाएं भी इस दिशा में प्रभावी कदम उठाएं।" संयुक्त राष्ट्र संघ विकास कार्यक्रम (यू.एन.डी.पी.) रिपोर्ट की उक्त टिप्पणी विश्व को पर्यावरण संकट की चेतावनी देते हुए तत्काल ठोस एवं प्रभावी व्यूहरचना अपनाए जाने की आवश्यकता को रेखांकित करती है।

तीव्र आर्थिक विकास के लिए अनियंत्रित रूप से प्राकृतिक संसाधनों के विदोहन, औद्योगिक क्रांति, द्रुतगामी परिवहन साधनों व बढ़ते मशीनीकरण के कारण आज सम्पूर्ण विश्व पर्यावरण–संकट जैसी ज्वलन्त समस्या से जूझ रहा है। मानव ने अपना जीवन सुविधाजनक, आरामदेह एवं विलासपूर्ण बनाने के लिए पर्यावरण को विनाश के कगार पर पहुंचा दिया है। विश्व में बढ़ते पर्यावरण संकट का अनुमान इसी तथ्य से लगाया जा सकता है कि आगामी कुछ वर्षों में सूखा प्रभावित क्षेत्र की लगभग 70 प्रतिशत जमीन बंजर हो जाएगी, जिससे विश्व के सौ देशों की एक अरब से अधिक जनसंख्या के जीवन अस्तित्व पर प्रश्नचिन्ह लग जाएगा।"

पर्यावरण पर बढ़ते संकट की झलक समुद्र के बढ़ते जल–स्तर, जैव–विविधता में ह्रास, पृथ्वी के बढ़ते तापमान के रूप में देखी जा सकती है। पर्यावरण असंतुलन की वजह से मानव, पशु–पक्षी और वनस्पति का जीवन संकट में है। कुछ दुर्लभ प्रजातियां नष्ट हो चुकी हैं, कुछ लुप्त होने के कगार पर हैं। प्राकृतिक प्रकोपों यथा बाढ़, सूखा, तूफान व सूनामी की संख्या उत्तरोतर बढ़ती जा रही है। ऐसा अनुमान है कि प्रतिवर्ष लगभग 500 आपदाएं सम्पूर्ण विश्व को आहत करती हैं। इसी संदर्भ में पर्यावरण संबंधी संयुक्त राष्ट्र की समिति इंटर–गवर्नमेंट चैनल ऑन क्लाइमेट चेंज (आईपीसीसी) ने अपनी रिपोर्ट में चेतावनी देते हुए लिखा है कि इस सदी के अंत तक भारत जैसे कई देशों को सूखे, बाढ़, तूफान जैसी कई आपदाओं से जूझना पड़ सकता है। इस रिपोर्ट ने पर्यावरण संकट के निवारण हेतु ठोस नीति के क्रियान्वयन की आवश्यकता को रेखांकित करते हुए स्पष्ट दिशा–निर्देश दिया है कि यदि हमने पर्यावरण के लिए प्रतिकूल गतिविधियां कम नहीं की तो स्थिति काफी भयावह होगी। रिपोर्ट में यह भविष्यवाणी भी की गई है कि आगामी कुछ दशकों में समुद्र के जलस्तर में 89 सें.मी. की वृद्धि होने से इंडोनेशिया के लगभग दो हजार द्वीपों का अस्तित्व खतरे में पड़ जाएगा। पर्यावरण संगठन की प्रमुख सुनीता नारायण ने भी चेतावनी दी है कि "अब समय आ गया है कि हम अपनी मूर्खता से बाहर निकले और निश्चित करें कि तीव्र आर्थिक विकास चाहिए अथवा पर्यावरण सुरक्षा।"

निसंदेह रूप से, वर्तमान में बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण ने मानव अस्तित्व पर ही प्रश्नचिन्ह लगा दिया है। ऐसी निराशाजनक एवं चिन्ताप्रद स्थिति में पर्यावरण संरक्षण एवं बढ़ते पर्यावरण प्रदूषण पर नियंत्रण करने में महिलाओं, मुख्यतौर पर ग्रामीण महिलाओं का योगदान महत्वपूर्ण साबित हो सकता है। ग्रामीण महिलाएं आदिकाल से ही प्रकृति के स्वरूप को यथावत रखने एवं प्रकृति संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रही हैं। महिलाओं का प्रकृति से तादात्म्य एवं प्रत्यक्ष जुड़ाव है। प्रसिद्ध पर्यावरणविद् वंदना शिवा ने भी इस तथ्य को रेखांकित करते हुए कहा है कि प्रकृति और महिलाओं में समानता है क्योंकि दोनों ही पोषण करते हैं। एण्डी कोलार्ड जैसे सुविख्यात लेखक ने तो "महिलाओं को प्रकृति का शिशु" कहकर महिलाओं की पहचान एवं भाग्य को प्रकृति के साथ ही जोड़ दिया है। इस संदर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि पर्यावरण प्रदूषण का

सर्वाधिक दुष्प्रभाव ग्रामीण महिला वर्ग को ही झेलना पड़ता है क्योंकि इनकी निर्भरता प्रकृति पर सर्वाधिक है।

हमारे देश में आज भी ग्रामीण महिलाएं वृक्षों, नदियों एवं कुंओं की पूजा–अर्चना करती हैं जोकि उनके प्रकृति प्रेम एवं प्रकृति के प्रति आस्था का परिचायक है। वृक्षों में विशेष रूप से आंवला, पीपल, वट, केला एवं तुलसी की पूजा की जाती है। गौरतलब है कि पीपल अत्यधिक मात्रा में ऑक्सीजन छोड़कर एवं उससे लगभग दुगुनी मात्रा में कार्बन–डाई–आक्साइड गैस को अवशोषित करके पर्यावरण शुद्धि में महती भूमिका निभा रहा है। यही नहीं, गीता में श्रीकृष्ण ने पीपल के महत्व को रेखांकित करते हुए अर्जुन से कहा, "वृक्षों में मैं पीपल हूं।" उनका यह कथन वृक्षों के प्रति लगाव, समर्पण एवं संरक्षण के महत्व को प्रतिपादित करता है। इसी भांति तुलसी जैसा पावन पादप पर्यावरण के दृष्टिकोण से बेहद लाभप्रद है। मलेरिया, बुखार, दाद–खुजली जैसी बीमारियों के निदान में भी तुलसी व नीम का महत्व सर्वविदित है। निर्विवाद रूप से विश्व में ऐसी कोई वनस्पति नही है जो औषधि के गुणों से युक्त न हो। इसी भांति गंगा, यमुना, कावेरी एवं नर्मदा जैसी पवित्र नदियों को 'मां' की उपमा से विभूषित किया जाता है तथा उनकी पूजा करते हुए ग्रामीण महिलाएं पर्यावरण संरक्षण हेतु मिसाल कायम कर रही हैं।

हालांकि इन महिलाओं को बेरहमी से मौत के घाट उतार दिया गया किन्तु इस आन्दोलन ने अन्य लोगों के समक्ष पर्यावरण संरक्षण का एक बेमिसाल उदाहरण रखा। इसी भांति, 1970 के दौरान हिमालय क्षेत्रों में इमारती लकड़ियों के ठेकेदार वनों का विनाश करने पर तुले थे किन्तु महिलाओं ने 'चिपको आन्दोलन' में सहयोग करके इस वन–विनाश को रोकने में सफलता प्राप्त की। वर्तमान में वंदना शिवा पर्यावरण संरक्षण, पर्यावरण जागरुकता एवं महिलाओं में पर्यावरण चेतना के बीज बोने हेतु अथक व सक्रिय प्रयास कर रही हैं जोकि अन्य महिलाओं के लिए भी अनुकरणीय है। गौरतलब है कि महिलाओं ने सक्रिय सहभागिता निभाई तथा हरे वृक्षों को बाहर ले जाने को रोकने में भी सफलता अर्जित की।

पर्यावरण–संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हुए बंगारी मथाई ने ग्रीन बेल्ट आंदोलन का शुभारम्भ किया। यही नहीं, बंगारी मथाई ने महिलाओं को पर्यावरण के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय मान्यता दिलाने हेतु अनवरत संघर्ष किया जिसके कारण पर्यावरण आंदोलन में महिलाओं को समावेशित किया गया है। इन सब की बदौलत ही बंगारी मथाई को वर्ष 2004 में नोबल शांति पुरस्कार से पुरस्कृत किया गया जोकि सराहनीय उपलब्धि है। हरित आंदोलन को प्रभावी बनाने हेतु बंगारी मथाई ने चार की अवधारणा प्रस्तुत की • Reduce • Reuse • Recycle • Repair निसंदेह रूप से इनके द्वारा प्रस्तुत अवधारणा को आत्मसात् करके सम्पूर्ण विश्व को पर्यावरण–संरक्षण का कवच प्रदान करना संभव है। बंगारी मथाई का अनुकरण अन्य महिलाएं करके विश्व के पर्यावरण को दूषित होने से बचा सकती हैं।

पर्यावरण हर मानव के जीवन को प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष ढंग से प्रभावित करता है। विशेष रूप से ग्रामीण महिलाओं का पर्यावरण से चोली–दामन का साथ है। शिक्षा का प्रसार, पर्यावरण के प्रति सकारात्मक सोच एवं प्रकृति प्रेम की उदांत भावना को प्रोत्साहित करके पर्यावरण–संरक्षण में ग्रामीण महिलाओं की सहभागिता को और अधिक बढ़ाया जाना संभव है।

आज हमारे देश की ग्रामीण महिलाएं जनसंख्या वृद्धि में बढ़ते तूफान को रोकने में प्रत्यक्ष सहभागिता निभाते हुए देश के प्राकृतिक संसाधनों पर बढ़ते दबाव को कम करके पर्यावरण–संरक्षण की दिशा में प्रयास कर सकती हैं। महिलाएं घर, मोहल्ले आदि की सफाई व्यवस्था का समुचित प्रावधान करके 'स्वच्छ पर्यावरण' को सुनिश्चित कर सकती हैं। घर के सूखे कचरे एवं गीले कचरे के लिए पृथक व्यवस्था करके, कचरे को पुनः उपयोगी बनाने की व्यवस्था करके, सफाई, बर्तन व नहाने में पानी के अपव्यय को रोककर पर्यावरण–संरक्षण के यज्ञ में अपनी आहुति दे सकती हैं। इसी भांति बायोगैस एवं उन्नत चूल्हे का उपयोग करके पर्यावरण को प्रदूषित होने से बचा सकती हैं। सौर ऊर्जा का वैकल्पिक ऊर्जा के रूप में अधिकाधिक उपयोग करके कार्बन उत्सर्जन की मात्रा में कटौती करना संभव है। अधिकांश गांव की महिलाएं नदी, तालाब व जोहड़ में स्नान करते समय साबुन का उपयोग करती हैं, वस्त्र प्रक्षालन में भी साबुन का प्रयोग करके इन जल–स्रोतों को प्रदूषित कर रही हैं। तथा इसी प्रदूषित जल का सेवन करते हुए अपने एवं अपने परिवार के स्वास्थ्य को चौपट कर रही हैं। अतः आवश्यकता है कि ग्रामीण महिलाओं को पर्यावरण के प्रति सचेत करके इस प्रवृत्ति पर रोक लगाई जाए।

ग्रामीण नारी शक्ति ही पर्यावरण का संरक्षण करके सम्पूर्ण विश्व को 'ग्लोबल वार्मिंग' के अभिशाप से मुक्ति दिला सकती हैं। ग्रामीण महिलाएं खेती का कार्य करते हुए प्रकृति एवं पर्यावरण से सीधे जुड़ी हुई हैं। अतः ग्रामीण महिलाओं को पर्यावरण के प्रति संवेदनशील बनाकर पर्यावरण संरक्षण किया जाना संभव है। सर्वविदित है कि ग्रामीण महिलाओं की भूमिका पशुपालन व्यवसाय में महत्वपूर्ण है। लगभग 70 प्रतिशत पशुपालन संबंधित गतिविधियों का संचालन ग्रामीण महिलाओं के द्वारा ही किया जाता है। वर्तमान में कृषि में रासायनिक उर्वरकों के अधिकाधिक उपयोग के कारण भूमि की उर्वरता में तीव्रगति से ह्रास हो रहा है, भूमि बंजर होती जा रही है जिसके कारण खेती "घाटे का सौदा" हो रही है जोकि समस्त विश्व के लिए चिन्ताजनक तथ्य है। इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि ग्रामीण महिलाएं पशुओं के गोबर आदि का उपयोग "जैविक खाद" के रूप में करके "जैविक खेती" के मार्ग पर अग्रसर हो सकती हैं। जैविक खेती को बढ़ावा देने से रासायनिक उर्वरकों के उपयोग में कमी आएगी जिससे काफी हद तक भू–प्रदूषण की समस्या के समाधान में मदद मिलेगी। यही नहीं, आज विश्व में जैविक उत्पादों की मांग व कीमत में तीव्र गति से बढ़ोतरी हो रही है जिसके कारण ग्रामीण महिलाओं की आर्थिक परिस्थिति मजबूत होगी तथा पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव भी कम होंगे।

आज सम्पूर्ण विश्व जल संकट व जल प्रदूषण की भयावह त्रासदियों से गुजर रहा है जोकि पर्यावरण के दृष्टिकोण से विचारणीय बिन्दु है। ग्रामीण महिलाएं जल संकट व जल प्रदूषण की इन समस्याओं के समाधान में अहम भूमिका निभा सकती हैं। ग्रामीण महिलाएं वर्षा जल के संरक्षण, जल के सदुपयोग को सुनिश्चित करके, खेती में जल की बरबादी को रोककर जल संकट की भीषण त्रासदी को कुछ सीमा तक कम कर सकती हैं।

पर्यावरण संरक्षण में ग्रामीण महिलाओं की भूमिका के संदर्भ में यह भी उल्लेखनीय तथ्य है कि अभी भी अधिकांश ग्रामीण महिलाएं घरेलू ईंधन की व्यवस्था हेतु वृक्षों, वनों और वनस्पतियों पर ही निर्भर हैं। ऐसी स्थिति में वृक्षों व वनों की संरक्षण व्यवस्था पर प्रश्नचिन्ह लग जाता है जोकि पर्यावरण के लिए नुकसानदेह है। इस निराशाजनक परिदृश्य में सुधार करने हेतु सरकार ग्रामीण महिलाओं को "गोबर (बायो) गैस संयंत्र" के उपयोग को बढ़ावा देने हेतु विविध प्रकार के प्रोत्साहन व वित्तीय सहायता उपलब्ध करवा रही है। गोबर गैस संचालित निर्धूम चूल्हे का उपयोग करके ग्रामीण महिलाएं पर्यावरण पर मंडराती काली छाया को कुछ हद तक रोक सकती हैं क्योंकि वृक्षों की लकड़ी, टहनी, पत्तों आदि को ईंधन के रूप में प्रयुक्त करने पर निष्कासित धुंआ पर्यावरण को काफी क्षति पहुंचाता है। इसी भांति, ग्रामीण महिलाओं को वृक्षारोपण का महत्व समझाते हुए उनको बागवानी, वृक्षारोपण, वृक्षों की देखभाल, निराई आदि के माध्यम से पर्यावरण–शुद्धि हेतु प्रेरित किया जा सकता है। पारम्परिक ग्रामीण समाज में घर के आंगन के मध्य में 'तुलसी' का पावन पौधा सुशोभित होता था जो पर्यावरण प्रहरी के रूप में कार्य करता था किन्तु आज वैश्वीकरण एवं आधुनिकीकरण की दौड़ में 'तुलसी' लुप्त हो रही है। इसका स्थान "कैक्टस, फ्लावर वाश, मनी प्लांट" जैसे पौधों ने ले लिया है। अतः आवश्यकता है कि इन पुरानी परम्पराओं को पुनर्जीवित किया जाए ताकि इनकी नींव पर पर्यावरण संरक्षण को सुदृढ़ किया जा सके।

वर्तमान में वंदना शिवा, मेघा पाटेकर, अरुंधती राय, सुनीता नारायण, मेनका गांधी एवं राधा भट्ट जैसी सशक्त महिलाएं पर्यावरण संरक्षण हेतु निरंतर संघर्षरत हैं जोकि अन्य महिलाओं के लिए अनुकरणीय है। उत्तराखण्ड में 'गौरा देवी' ने चिपको आंदोलन के माध्यम से ही पेड़ों को बचाने का अभियान शुरू किया जोकि पर्यावरण–संरक्षण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम है। इस भांति भारतीय मूल की बाल साहित्यकार गनेरी ने पृथ्वी को 'ग्लोबल वार्मिंग' से बचाने के लिए किशोरियों को प्रेरित करने हेतु एक पुस्तक ''प्लैनेट इन पेरिल'' लिखी है।

इनको इस पुस्तक के लिए प्रतिष्ठित पीटर बुकर पुरस्कार से सम्मानित किया जा चुका है। गौरतलब है कि कमला चौधरी वर्ल्ड वाटरशेट मैनेजमेंट के प्रमुख पद पर भी कार्य कर चुकी हैं। गांधी शांति प्रतिष्ठान की अध्यक्षा राधा भट्ट भी 'नदी बचाओ आंदोलन' एवं हिमालय सेवा संघ हेतु कार्य करते हुए पर्यावरण के क्षेत्र में महती योगदान दे रही हैं। इसी भांति प्रसिद्ध पर्वतारोही और पर्यावरणविद् डा. हर्षवती बिष्ट ने पर्यावरण संरक्षण के लिए गोमुख के समीप भोजबासा में भोजवृक्षों को नया जीवन देकर दुर्लभ वन–सम्पदा को संरक्षित किया। गौरतलब है कि गंगोत्री के निकट अवस्थित लोगों ने भोजवृक्ष को लगभग नष्ट कर दिया। किन्तु डा. बिष्ट ने अपने अनवरत एवं अथक प्रयासों से इन वृक्षों को जीवनदान प्रदान करके पर्यावरण–संरक्षण की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया है। यही नहीं, डा. बिष्ट ग्लेशियर पिघलने व गंगा को प्रदूषण से बचाने हेतु भी प्रयासरत हैं।

ज्ञातव्य है कि पर्यावरण–ह्रास का सर्वाधिक शिकार भी ग्रामीण महिलाएं होती हैं। नदी–नाले, जोहड़, पोखर व तालाबों के सूख जाने या उनमें जल की कमी होने के कारण ग्रामीण महिलाएं सिर पर मटके का बोझ उठाते हुए जल–प्रबंधन व्यवस्था का असफल प्रयास करती हैं जिससे उनका काफी समय व ऊर्जा का अपव्यय होता है। इसी भांति वृक्षों की कटाई होने तथा वृक्षों की संख्या कम होने के कारण से ग्रामीण महिलाओं को ईंधन हेतु लकड़ियां एकत्रित करने के लिए मीलों दूर भटकना पड़ता है। गौरतलब है कि वर्तमान में स्वयं ग्रामीण महिलाएं भी पंचायतों के माध्यम से सत्ता के केन्द्र में हैं। अतः ग्रामपंच, सरपंच महिलाएं स्वयं आगे बढ़कर पर्यावरण–संरक्षण की दिशा में प्रभावी प्रयास कर सकती हैं, पर्यावरण–संरक्षण के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं के समय, परिश्रम व ऊर्जा की बचत की जानी संभव है। उद्देश्य की पूर्ति हेतु यह आवश्यक है कि आंगनबाड़ी और सामुदायिक केन्द्रों के माध्यम से ग्रामीण महिलाओं को उन्नत चूल्हे, सोलर–कुकर व बायोगैस आदि के बारे में सम्पूर्ण जानकारी उपलब्ध कराई जाए तथा ग्रामीण गरीब महिलाओं को सस्ते दामों पर या निशुल्क उपलब्ध कराए जाने की व्यवस्था की जाए ताकि वे धुएं, जहरीली गैसों आदि के घातक प्रभावों से स्वयं व परिवार को बचा सकें। इसी प्रकार ग्राम पंच–सरपंच महिलाएं ग्राम पंचायतों के माध्यम से नदी–तटों पर उद्योगों की स्थापना को प्रतिबंधित करके, वृक्षों की कटाई को रोककर वृक्षारोपण के कार्यक्रम को क्रियान्वित करके, तथा हैण्डपम्प लगवाने के साथ उनके रखरखाव व मरम्मत आदि का प्रबन्ध करके, शुद्ध जल स्रोतों का निर्माण करके तथा मलमूत्र निकास हेतु सस्ते व सुविधाजनक शौचालयों की व्यवस्था करके पर्यावरण को खुशहाल बना सकती हैं।

निसंदेह रूप से, ग्रामीण महिलाओं में चेतना जागृत करके उनके हाथों में पर्यावरण–संरक्षण के इस महत्वपूर्ण कार्य की बागडोर सौंपी जा सकती है जिसके चलते ग्रामीण महिलाओं के स्वास्थ्य व खुशहाली में भी अप्रत्याशित परिवर्तन दृष्टिगोचर होंगे। पर्यावरण प्रदूषण के विविध खतरों का जनक स्वयं मानव है अतः इनके निवारण हेतु समय रहते प्राकृतिक संसाधनों का अनियंत्रित एवं अविवेकपूर्ण ढंग से दोहन रोकना जरुरी है अपितु संसाधनों को भावी पीढ़ी के लिए भी सहेजकर सुरक्षित रखा जा सके। हमें ऐसी व्यवस्था के विकास को प्राथमिकता प्रदान करनी होगी जिसमें मानव आवश्यकताओं और संसाधनों के मध्य सदैव संतुलन एवं समायोजन स्थापित किया जा सके। इन सब कार्यों को परिपूर्ण करने के लिए नेचर क्लबों, नेचर कैम्पों आदि को संगठित किया जाए, पर्यावरण संरक्षण से संबंधित विभिन्न कार्यक्रमों को विविध स्तरों पर आयोजित किया जाए ताकि आम नागरिक भी पर्यावरण संरक्षण के यज्ञ में अपनी आहुति दे सके तथा शुद्ध पर्यावरण की प्राप्ति संभव हो सके।

(लेखिका पीजी कालेज में अर्थशास्त्र की विभागाध्यक्ष हैं।)
ई–मेलः anita3modi@gmail.com

ग्वार एक बहु-उपयोगी फसल

डॉ. वीरेन्द्र कुमार एवं वाई.एस.राठी

ग्वार खरीफ ऋतु में उगायी जाने वाली एक बहु-उपयोगी फसल है। ग्वार कम वर्षा और विपरीत परिस्थितियों वाली जलवायु में भी आसानी से उगायी जा सकती है। ग्वार की एक प्रमुख विशेषता यह भी है कि यह उन मृदाओं में आसानी से उगायी जा सकती है जहां दूसरी फ़सलें उगाना अत्यधिक कठिन है। अतः कम सिंचाई वाली परिस्थितियों में भी इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। भारत विश्व में सबसे अधिक ग्वार की फसल उगाने वाला देश है। ग्वार की खेती दाने के लिए, हरे चारे हेतु, हरी खाद के लिए व हरी सब्जी के लिए की जाती है। ग्वार पशुओं के लिए भी पौष्टिक आहार है। इसके दानों से एक प्रकार का गोंद प्राप्त होता है जो सम्पूर्ण विश्व में 'ग्वार गम' के नाम से प्रचलित है। ग्वार गम का प्रयोग कई प्रकार के उद्योग-धन्धों व औषधि निर्माण में किया जाता है। पेट साफ करने, रोचक औषधि तैयार करने, कैप्सूल व गोलियां बनाने में ग्वार गम का प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा खनिज, कागज व कपड़ा उद्योग में भी ग्वार गम महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। खाद्य पदार्थों जैसे आइसक्रीम, सूप व सलाद बनाने में भी ग्वार गम का बड़ा महत्व है।

देश के पश्चिमी भाग के शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में किसानों की आय बढ़ाने के लिए ग्वार एक अति महत्वपूर्ण फसल है। यह सूखा सहन करने के अतिरिक्त अधिक तापक्रम को भी सह लेती है। भारत में ग्वार की खेती प्रमुख रूप से राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, गुजरात व उत्तर प्रदेश में की जाती है। हमारे देश के सम्पूर्ण ग्वार उत्पादक क्षेत्र का करीब 87.7 प्रतिशत क्षेत्र राजस्थान में है। सब्जी वाली ग्वार की फसल से बुवाई के 55–60 दिनों बाद कच्ची फलियां तुड़ाई पर आ जाती हैं। अतः ग्वार के दानों और ग्वार चूरी को पशुओं के खाने और प्रोटीन की आपूर्ति के लिए भी प्रयोग किया जाता है। ग्वार की फसल वायुमण्डलीय नाइट्रोज़न का भूमि में स्थिरीकरण करती है। अतः ग्वार जमीन की ताकत बढ़ाने में भी उपयोगी है। फसल चक्र में ग्वार के बाद ली जाने वाली फसल की उपज हमेशा बेहतर मिलती है। इसी कारण गुजरात और राजस्थान के किसान ग्वार के बाद खाद्यान्न या मोटे अनाज की फसल लेते हैं। व्यावसायिक जागरुकता एवं अर्न्तराष्ट्रीय बाजार में इसकी बढ़ती मांग और आसमान छूती कीमतों के कारण किसान भाई इसके उत्पादन पर जोर दे रहे हैं। परन्तु ग्वार की खेती के सम्बन्ध में वैज्ञानिक जानकारी न मिलने के कारण किसानों को इसका पूरा लाभ नहीं मिल रहा है।

औद्योगिक महत्व

ग्वार एक बहु–उपयोगी फसल है। भारत प्रतिवर्ष हजारों टन ग्वार विदेशों को निर्यात करता है जिससे बहुमूल्य विदेशी मुद्रा का भंडार बढ़ता है। ग्वार का आयात करने वाले देशों में अमेरिका, इंग्लैण्ड, जर्मनी, जापान आदि शामिल हैं। कागज निर्माण के समय ग्वार गम को लुगदी में मिलाया जाता है जिससे कागज ठीक से फैल सके और अच्छी गुणवत्ता का कागज तैयार किया जा सके। कपड़ा उद्योग में यह मांडी लगाने के उपयोग में लाया जाता है। श्रृंगार वस्तुओं जैसे लिपिस्टिक, क्रीम, शेम्पू और हैण्ड लोशन में भी ग्वार गम का प्रयोग किया जाता है। इसके अलावा दन्त मंजन, शेविंग क्रीम जैसी वस्तुओं के निर्माण में भी ग्वार गम का प्रयोग होता है। ग्वार गम का प्रयोग विस्फोटकों को जलामेथ करने में तथा तेल ड्रिलिंग उद्योगों में डाट लगाने के लिए भी महत्वपूर्ण है।

वानस्पतिक विवरण

ग्वार लेग्युमिनेसी कुल का एकवर्षीय पौधा है। इसका वैज्ञानिक नाम साइमोपसिस टेट्रागोनोलोबा है। इसका पौधा बहु–शाखीय व सीधा बढ़ने वाला है। पौधे की लम्बाई 30–90 से.मी. तक होती है। इसकी जड़ें मृदा में काफी गहराई तक जाती हैं। ग्वार के फूल आकार में छोटे व गुलाबी रंग के होते हैं। फलियां लम्बी व रोएंदार होती हैं। ग्वार एक स्वपरांगित फसल है। बुवाई के 70–75 दिनों बाद फलियां आनी शुरू हो जाती हैं। सामान्यतः 110–133 फलियां प्रति पौधा आ जाती हैं।

वितरण एवं क्षेत्र

विश्व में भारत और पाकिस्तान सबसे अधिक ग्वार की फसल उगाने वाले देश हैं। विश्व की 75 प्रतिशत ग्वार भारत में ही पैदा होती है। इसके अतिरिक्त ग्वार इण्डोनेशिया, अमेरिका, इटली और अफ्रीका में भी उगायी जाती है। भारत में ग्वार का सर्वाधिक क्षेत्रफल (23.3 मि.हे.), उत्पादन (10.2 लाख टन) एवं औसत उत्पादकता (428 कि.ग्रा./हे.) है। भारत के सम्पूर्ण ग्वार उत्पादक क्षेत्र का करीब 87.7 प्रतिशत क्षेत्र राजस्थान में है। इसके अलावा ग्वार उत्तर–पश्चिम राज्यों जैसे पंजाब, हरियाणा, महाराष्ट्र, गुजरात एवं उत्तर प्रदेश में उगायी जाती है। राजस्थान और गुजरात में यह मुख्यतया दाने के लिए, हरियाणा, पंजाब और पश्चिम उत्तर प्रदेश में हरे चारे, हरी फलियां और हरी खाद के लिए उगायी जाती हैं।

पौष्टिकता

ग्वार के बीज में लगभग 37–45 प्रोटीन, 1.4–1.8 पोटेशियम, 0.40–0.80 कैल्शियम और 0.15–0.20 मैग्निशियम पाया जाता है। ग्वार की ताजा व नर्म–मुलायम फलियों को सब्जी और भुरता बनाने के काम में लाया जाता है। कच्ची सुखाकर रखी हुई फलियों का प्रयोग भी सब्जी बनाने में किया जाता है। फलियों को सुखाकर व नमक मिलाकर लम्बे समय तक उपयोग के लिए रखा जा सकता है। ग्वार की हरी फलियों में रेशे की

मात्रा अधिक पायी जाती है। इसके सेवन से पाचन सम्बन्धी रोग दूर हो जाते हैं। ग्वार प्रोटीन, विटामिन ए, लोहा व फोलिक अम्ल का अच्छा स्रोत है। हरी फलियों के 100 ग्राम भाग में 81.0 ग्राम पानी, 3.2 ग्राम प्रोटीन, 0.4 ग्राम वसा, 1.4 ग्राम खनिज, 3.2 ग्राम रेशा और 10.8 ग्राम कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है। इसके अतिरिक्त हरी फलियों में कैल्शियम (130 मि.ग्रा.), फास्फोरस (57 मि.ग्रा.), लोहा (1.08 मि.ग्रा.) तथा विटामिन ए, थाइमिन, फोलिक अम्ल और विटामिन सी इत्यादि भी इसमें पाए जाते हैं। ग्वार जानवरों के लिए भी एक पौष्टिक आहार है। ग्वार के दानों और ग्वार चूरी को जानवरों के खाने में प्रोटीन की कमी को पूरा करने के लिए दिया जाता है। हरे चारे के रूप में इसे फलियां बनते समय पशुओं को खिलाया जाता है। इस अवस्था पर इसमें प्रोटीन व खनिज लवणों की मात्रा अधिक पायी जाती है। ग्वार के दानों का 14 से 17 प्रतिशत छिलका तथा 35 से 42 प्रतिशत भाग भ्रूणपोष होता है। ग्वार के दानों के भ्रूणपोष से ही 'ग्वार गम' उपलब्ध होता है।

उन्नतशील प्रजातियां

ग्वार की उन्नतशील प्रजातियों को मुख्यतः तीन भागों–दाने, चारे व हरी फलियों के रूप में बांटा जा सकता है।

दाने के लिए– मरू ग्वार, आर.जी.सी.–986, दुर्गाजय , अगेती ग्वार–111, दुर्गापुरा सफेद, एफ.एस.–277 , आर.जी.सी. –197, आर.जी.सी,.–417

हरी फलियों हेतु– आई.सी.–1388, पी.–28–1–1, गोमा मंजरी, एम.–83 ,पूसा सदाबहार ,पूसा मौसमी, पूसा नवबहार, शरद बहार

हरे चारे हेतु– एच.एफ.जी.–119, एच.एफ.जी.–156, ग्वार क्रान्ति, मक ग्वार, बुन्देल ग्वार–1 (आई.जी.एफ.आर.आई.–212–1), बुन्देल ग्वार–2,आर.आई.–2395–2, बुन्देल ग्वार–3, गोरा–80

ग्वार की पैदावार में कमी के प्रमुख कारण

- ग्वार की अधिकांश खेती वर्षा आधारित क्षेत्रों में की जाती है। जहां पर इसकी पैदावार वर्षा की मात्रा व वितरण पर निर्भर करती है। सितम्बर माह में ग्वार में फलियां बनती हैं और उनमें दाने बनते हैं। इस समय प्रायः वर्षा की कमी के कारण पैदावार में भारी गिरावट आ जाती है।

- ग्वार को साधारणतः उन भूमियों में उगाया जाता है जहां पर दूसरी फसलें उगाना कठिन है। इन भूमियों की फसल पैदा करने की क्षमता बहुत कम होती है। साथ ही जीवांश पदार्थों की भी इन मृदाओं में काफी कमी होती है।

- उच्च तकनीकी एवं उन्नतशील शीघ्र पकने वाली प्रजातियों का अभाव। अभी तक किसान खेती की परम्परागत विधियों और देशी प्रजातियों को ही उगाते हैं।

- ग्वार की खेती में किसान आमतौर पर खाद, जैविक उर्वरक एवं उर्वरक प्रबन्धन को नजरअंदाज करते हैं।

- किसानों को पर्याप्त मात्रा में उन्नतशील प्रजातियों का प्रमाणित बीज नहीं मिल पाता है।

- किसानों में व्याप्त निर्धनता व साक्षरता का अभाव भी ग्वार की उत्पादकता को प्रभावित करता है।

जलवायु

ग्वार एक सूखा सहन करने वाली व गर्म जलवायु की फसल है। यह उन क्षेत्रों में आसानी से उगायी जा सकती है जहां पर औसत वार्षिक वर्षा 30–40 सें.मी. तक होती है। बीजों के अंकुरण व जड़ों के विकास के लिए 25 से 300 सें. के नीचे तापमान उपयुक्त होता है। ग्वार एक प्रकाश संवेदनशील फसल है। अतः इस फसल में फूल व फलियों का निर्माण केवल खरीफ के मौसम में ही होता है। अत्यधिक बरसात व ठण्ड को यह सहन नहीं कर

पाती है। जिन क्षेत्रों में अत्यधिक गर्मी पड़ती है परन्तु सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है वहां पर ग्वार की खेती से भरपूर पैदावार ली जा सकती है। शुष्क और अर्ध–शुष्क दोनों दशाओं में इसकी खेती आसानी से की जा सकती है।

भूमि

ग्वार की खेती के लिए उचित जल निकास वाली बलुई दोमट मिट्टी सर्वोत्तम रहती है। यह फसल सिंचित एवं असिंचित दोनों क्षेत्रों में सफलतापूर्वक उगायी जा सकती है। हल्की क्षारीय व लवणीय भूमि जिसका पी.एच. मान 7.5 से 8.5 तक हो, वहां पर ग्वार की खेती आसानी से की जा सकती है।

खेत की तैयारी

ग्वार की भरपूर पैदावार के लिए एक जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से और दो जुताइयां ट्रैक्टर चालित कल्टीवेटर से करें।

प्रत्येक जुताई के बाद पाटा अवश्य लगाएं जिससे मृदा नमी संरक्षित रहे। जुताई जून के द्वितीय पखवाड़े में करनी चाहिए। इस प्रकार तैयार खेत में खरपतवार कम पनपते हैं। साथ ही वर्षा जल का अधिक संचय होता है। इसी समय पूर्णतया सड़ी हुई गोबर की खाद सम्पूर्ण खेत में बिखेर कर अच्छी तरह मिट्टी में मिला दें।

बुवाई का समय

ग्रीष्मकालीन फसल की बुवाई के लिए मध्य फरवरी से मार्च का प्रथम पखवाड़ा उपयुक्त समय है। देरी से बुवाई करने पर पैदावार पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है जबकि वर्षा ऋतु की फसल की बुवाई के लिए जून–जुलाई उपयुक्त समय है। वर्षा आधारित क्षेत्रों में जुलाई में वर्षा आगमन के साथ ही ग्वार की बुवाई कर देनी चाहिए। ग्वार की बुवाई मध्य अगस्त तक की जा सकती है। प्रकाश असंवेदनशील प्रजातियों के विकास और उनकी उपलब्धता के कारण ग्वार की खेती जायद में भी आसानी से की जा सकती है।

बीज की मात्रा

ग्वार के बीज की मात्रा इस बात पर निर्भर करती है कि उसे किस उद्देश्य के लिए उगाया जा रहा है। दाने एवं हरी फलियों के लिए 15 से 18 कि.ग्रा., हरी खाद वाली फसल के लिए 30 से 35 कि.ग्रा. तथा चारे वाली फसल के लिए 35 से 40 कि.ग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर पर्याप्त होता है। खरीफ ऋतु की अपेक्षा ग्रीष्मकालीन फसल में बीज अधिक लगता है।

बीजोपचार

बीजों के अच्छे जमाव व फसल को रोगमुक्त रखने के लिए ग्वार के बीजों को सबसे पहले 2.0 ग्राम बाविस्टिन या कैप्टान नामक फफूंदीनाशक दवा से प्रति किलो बीज की दर से अवश्य उपचारित करें। पौधों की जड़ों में गांठों का अधिक निर्माण हो व वायुमंडलीय नाइट्रोजन का भूमि में अधिक यौगिकीकरण हो, इसके लिए बीजों को राइजोबियम नामक जीवाणु उर्वरक से उपचारित करना बहुत जरूरी है। बीज उपचार बुवाई के ठीक पहले कर लेना चाहिए। एक हेक्टेयर क्षेत्र में बुवाई हेतु राइजोबियम जीवाणु के 200 ग्राम के दो पैकेट पर्याप्त होते हैं। किसान भाई ध्यान रखें कि यदि उन्होंने बीज किसी विश्वसनीय संस्था से खरीदा है तो उसे फफूंदीनाशक दवा से उपचारित करने की आवश्यकता नहीं है। यह बीज पहले से ही उपचारित होता है।

बुवाई की विधि

अधिक पैदावार के लिए ग्वार की बुवाई हमेशा पंक्तियों में करें। बुवाई हल के कुड़ों में अथवा सीडड्रिल की सहायता से करें। कुड़ों में पौधों की जड़ों के पास वर्षा जल भी अधिक संग्रहित होता है। इससे पैदावार अधिक मिलती है और फसल की देखभाल करने में भी आसानी रहती है। भरपूर पैदावार हेतु पंक्ति से पंक्ति की दूरी 30 सें.मी. तथा पौधे से पौधे की दूरी 15 सें.मी. आदर्श मानी जाती है। बुवाई के समय भूमि में पर्याप्त नमी होनी चाहिए जिससे बीज का जमाव शीघ्र व पर्याप्त मात्रा में हो सके। बुवाई पूरब–पश्चिम दिशाओं में करें जिससे सभी पौधों को सूर्य का प्रकाश पर्याप्त मात्रा में और लम्बी अवधि तक मिलता रहे। किसान भाइयों को सलाह दी जाती है कि बुवाई कभी भी छिटकवां विधि से न करें। इसमें समय तो कम लगता है परन्तु उपज काफी कम मिलती है। जिन क्षेत्रों में जल निकास की समस्या रहती है वहां जलभराव होने पर पानी को

तुरन्त खेत से बाहर निकाल दें। सघन विधि की दशा में अंकुरण के 10–12 दिन बाद अतिरिक्त व कमजोर पौधों को निकाल देना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक प्रबन्धन

दलहनी फसल होने के कारण सामान्यतः ग्वार की फसल में उर्वरकों की कम आवश्यकता पड़ती है। ग्वार का बेहतर उत्पादन लेने के लिए 20–25 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40–50 कि.ग्रा. फास्फोरस, 20 कि.ग्रा. सल्फर की सिफारिश वैज्ञानिकों द्वारा की गई है। सभी उर्वरक बुवाई के समय या अन्तिम जुताई के समय देने चाहिए। फास्फोरस के प्रयोग से न केवल चारे की उपज में वृद्धि होती है बल्कि उसकी पौष्टिकता भी बढ़ती है। बहुत हल्की मृदाओं में जहां पर मिट्टी की जांच सम्भव न हो वहां पर 300–400 कुन्तल गोबर की सड़ी खाद का प्रयोग खेत में अन्तिम जुताई से पहले समान रूप से बिखेर कर करें। इससे मृदा में नमी संग्रहण व जीवांश की मात्रा बढ़ाने में मदद मिलती है। इसके अलावा ग्वार के दाने व फली की गुणवत्ता बढ़ने के साथ ही मृदा की भौतिक दशा में भी सुधार होता है।

सिंचाई प्रबन्धन

सामान्यतः खरीफ ऋतु में बोयी फसल में सिंचाई की कोई आवश्यकता नहीं होती है। वर्षा सामान्य व समय पर न होने पर एक या दो सिंचाइयों की आवश्यकता पड़ती है। फलियों के लिए उगायी गयी फसल में सिंचाई का विशेष महत्व है। फूल आने और फलियां बनने के समय मृदा में नमी की कमी नहीं होनी चाहिए अन्यथा फलियों की पैदावार व गुणवत्ता पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। शुष्क व अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में उगायी जाने वाली ग्वार की फसल में समय पर वर्षा न हो तो आवश्यकतानुसार एक–दो सिंचाई देकर किसान भाई अधिक उत्पादन ले सकते हैं। ग्रीष्मकालीन फसल में आवश्यकतानुसार 6–7 दिनों के अन्तराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए।

खरपतवार नियन्त्रण

ग्वार की फसल को खरपतवारों से पूर्णतया मुक्त रखना चाहिए। सामान्यतः फसल बुवाई के 10–12 दिन बाद कई तरह के खरपतवार निकल आते हैं जिनमें मौथा, जंगली जूट, जंगली चरी (बरू) व दूब–घास प्रमुख हैं। ये खरपतवार पोषक तत्वों, नमी, सूर्य का प्रकाश व स्थान के लिए फसल से प्रतिस्पर्धा करते हैं। परिणामस्वरूप पौधे का विकास व वृद्धि ठीक से नहीं हो पाती है। अतः ग्वार की फसल में समय–समय पर निराई–गुड़ाई कर खरपतवारों को निकालते रहना चाहिए। इससे पौधें की जड़ों का विकास भी अच्छा होता है तथा जड़ों में वायु संचार भी बढ़ता है। दाने वाली फसल में बेसालिन 1.0 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से खेत में बुवाई से पूर्व मृदा की ऊपरी 8 से 10 सें.मी. सतह में छिड़काव कर खरपतवारों पर नियन्त्रण पाया जा सकता है। इसके अलावा पेंडिमिथेलीन का 3 लीटर प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई के दो दिन बाद छिड़काव करना चाहिए। इसके लिए 700 से 800 लीटर पानी में बना घोल एक हेक्टेयर के लिए पर्याप्त होता है।

अन्तः फसल प्रणाली

ग्वार की फसल अन्तः फसल प्रणाली के लिए बहुत उपयोगी है। इसे खाद्यान्न फसलों जैसे ज्वार, बाजरा व मक्का के साथ अन्तः फसल के रूप में आसानी से सम्मिलित किया जा सकता है। इसके अलावा बागवानी फसलों जैसे आंवला, बेर व बेल की दो पंक्तियों के बीच खाली पड़ी जगह पर ग्वार की अन्तः फसल आसानी से ली जा सकती है। इससे न केवल प्रति इकाई क्षेत्र अतिरिक्त आय प्राप्त होती है बल्कि ग्वार दलहनी फसल होने के कारण मृदा उर्वरता बढ़ाने में भी सहायक है जिसका खाद्यान्न व बागवानी वृक्षों की वृद्धि और विकास पर भी अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

कीट एवं रोग नियन्त्रण

ग्वार की फसल में कीटों की समस्या कम रहती है। ग्वार में लगने वाले कीटों में एफिड़ (माहू), पत्ती छेदक, सफेद मक्खी,

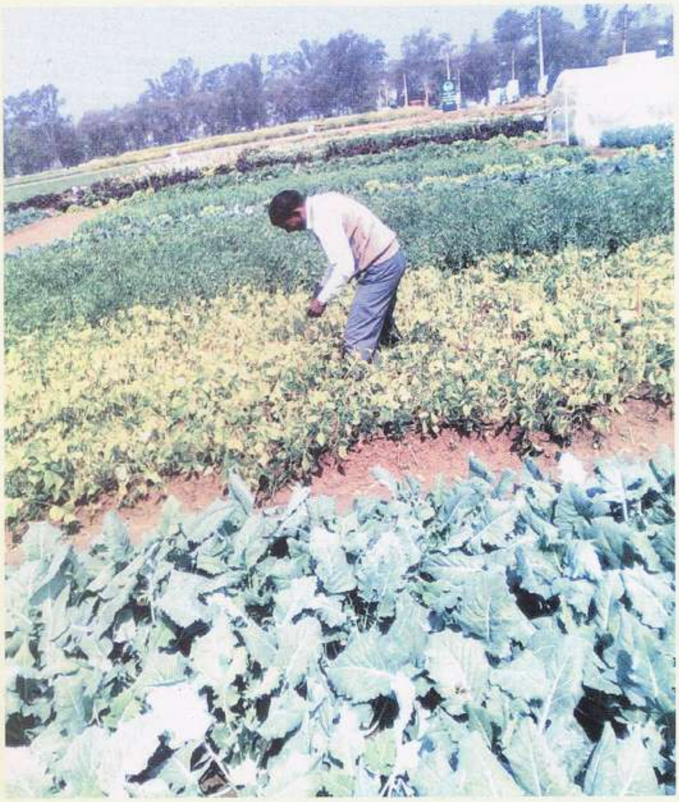

लीफ हापर या जैसिड़ व केटरपिलर प्रमुख हैं। भरपूर उत्पादन हेतु इन कीटों को नियन्त्रित करना बहुत जरूरी है। एफिड, जैसिड़ व केटरपिलर की रोकथाम हेतु एण्डोसल्फान 4 प्रतिशत पाउडर का 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए या इण्डोसल्फान 35 ई.सी. की 0.07 प्रतिशत की दर से फसल पर 10 दिनों के अन्तराल पर दो छिड़काव उपयोगी पाए गए हैं। सफेद मक्खी के नियन्त्रण हेतु इमिडाक्लोरपिड़ 0.03 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए। इसके अलावा जहां पानी की सुविधा हो, मिथाइल पैराथियान 50 प्रतिशत 750 मि.ली. प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करना चाहिए। शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों की मृदाओं में भूमिगत कीटों विशेषकर दीमक का अधिक प्रकोप होता है। इसकी रोकथाम हेतु क्लोरपायरीफास या एन्डोसल्फान 4 प्रतिशत या क्यूनालफास 1.5 प्रतिशत पूर्ण 25 कि.ग्रा./हेक्टेयर की दर से बुवाई पूर्व मिट्टी में अच्छी तरह से मिला दें।

ग्वार की फसल के प्रमुख रोगों में जीवाणुज अंगमारी, ऑल्टरनेरिया पर्ण अंगमारी, जड़ गलन, चूर्णिल आसिता व ऐन्थ्रेक्नोज है। इनमें जीवाणुज अंगमारी ग्वार में लगने वाली भयंकर बीमारी है। बीमारी के लक्षण सर्वप्रथम पत्तियों की ऊपरी सतह पर बड़े–बड़े धब्बे के रूप में प्रकट होते हैं। ये धब्बे शीघ्र ही सम्पूर्ण पत्तियों को ढक लेते हैं। अतः पत्तियां गिर जाती हैं। इससे बचाव हेतु रोगरोधी किस्में बोएं। बुवाई से पूर्व बीज उपचार अवश्य करें। इसके लिए स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 100–250 पी.पी.एम. (100–250 मिलीग्राम/लीटर) घोल का प्रयोग करना चाहिए। आल्टरनेरिया पर्ण अंगमारी वर्षा होने के समय फसल को नुकसान पहुंचाती है। यह एक फफूंदजनित बीमारी है। इसमें पत्तियों के किनारों पर गहरे भूरे, गोलाकार व अनियमित आकार के धब्बे बन जाते हैं। परिणामस्वरूप पत्तियां पीली पड़ जाती हैं और अन्ततः झड़ जाती हैं। इससे बचाव हेतु डाइथेन जेड–78 का 0.20 प्रतिशत का छिड़काव रोग के लक्षण प्रकट होने पर 15 दिन के अन्तराल पर दो या तीन बार करें। ऐन्थ्रेक्नोज भी एक फफूंदीजनित रोग है। इसमें पौधों के तनों, पर्णवृन्तों और पत्तियों पर काले धब्बे बन जाते हैं। इससे बचाव हेतु डायथेन जेड–78 का 0.20 प्रतिशत का छिड़काव करना चाहिए। जड़ गलन रोग से बचाव हेतु वीटावैक्स या बाविस्टीन की दो ग्राम प्रति कि.ग्रा. बीज की दर से उपचारित करने के बाद बुवाई करनी चाहिए। चूर्णिल आसिता बीमारी की रोकथाम के लिए घुलनशील गंधक (0.3 प्रतिशत) का एक कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से 15 दिनों के अन्तराल पर खड़ी फसल में छिड़काव करना चाहिए।

कटाई एवं मड़ाई

सब्जी वाली फसल में फलियों को मुलायम अवस्था में ही हाथों से तोड़ लेना चाहिए। सब्जी वाली फसल में 55 से 70 दिनों बाद फलियां तुड़ाई के लिए तैयार हो जाती हैं। नर्म, कच्ची व हरी फलियों की तुड़ाई पांच दिनों के अन्तराल पर नियमित रूप से करते रहना चाहिए। देरी से तुड़ाई करने पर फलियां सख्त हो जाती हैं जिससे इनकी गुणवत्ता में कमी आ जाती है। साथ ही बाजार भाव भी कम मिलता है। जहां तक हो सके फलियों की तुड़ाई सुबह जल्दी करनी चाहिए। चारे के लिए बोयी गयी फसल 60 से 80 दिनों में फूल आने के समय या फलियां आने की अवस्था पर कटाई हेतु तैयार हो जाती हैं। यदि फसल दानों के लिए बोयी गयी है तो पूर्ण रूप से पकने पर ही फसल की कटाई करें। कटाई हंसिये/दरांती की मदद से करके उनको बण्डलों में बांधकर सूखने के लिए धूप में छोड़ दें। इसके 7–10 दिन बाद मड़ाई कर दानों को अलग कर लेते हैं।

उपज

उन्नत सस्य प्रौद्योगिकियां अपनाकर किसान भाई ग्वार की फसल से 250–300 क्विंटल हरा चारा, 12–18 क्विंटल दाना और 70 से 120 क्विंटल हरी फलियां प्रति हेक्टेयर प्राप्त कर सकते हैं। यद्यपि ग्वार फली की उपज मौसम, प्रजाति, मृदा के प्रकार और सिंचाई सुविधाओं पर निर्भर करती है।

(लेखक भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में कार्यरत हैं।)
ई–मेलः v.kumamovod@yahoo.com

स्वास्थ्य-चर्चा

स्वास्थ्य का खजाना है गूलर

अनिल कुमार

प्रकृति ने हमें अनमोल खजाना दिया है। हमारे चारों तरफ तमाम ऐसी चीजें मौजूद हैं जिनके जरिए हम अपना जीवन स्वस्थ एवं सुंदर बना सकते हैं। इनमें से ही एक है गूलर। गूलर स्वास्थ्य के लिए बहुत उपयोगी है। यही वजह है कि प्राचीनकाल से लेकर अब तक गांवों में गूलर के पेड़ मौजूद हैं। इसका फल से लेकर पत्ती और छाल तक मानव जीवन के लिए उपयोगी है। यह पेड़ पर्यावरण को शुद्ध करता है तो इसके फल व पत्ती विभिन्न तरह की बीमारियों में औषधि का काम करते हैं। भारत ही नहीं पूरी दुनिया में पाया जाने वाला गूलर स्वास्थ्य का खजाना है। इसका प्रयोग करके तमाम बीमारियों से निशुल्क रक्षा की जा सकती है।

आयुर्वेद चिकित्सा ग्रंथ चरक संहिता, सुश्रुत संहिता आदि में गूलर और उसके विभिन्न गुणों के बारे में विस्तार से वर्णन मिलता है। गूलर फिकस कुल का एक विशाल वृक्ष है। यह पर्यावरण शुद्धिकरण के साथ पारिस्थितिकी तंत्र में भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इसे संस्कृत में उदुम्बर, बांग्ला में हुमुर, गुजराती में उम्बरा, अरबी में जमीझ, फारसी में अंजीरे आदम कहते हैं। गूलर का फल ही नहीं समूचा पेड़ किसी न किसी रूप में मानव जाति के लिए कारगर है। गूलर की छाया ठंडी और सुखकारी होती है। गूलर की लकड़ी बहुत मजबूत और चिकनी होती है। गूलर के फलों का आकार अंजीर के फल जैसा होता है। इसके फूल अक्सर दिखाई नहीं देते हैं। यही वजह है कि गूलर के फूल को लेकर तमाम कहावतें भी कही गई हैं। गूलर के फल गर्मी के मौसम में 1 से 2 इंच व्यास के गोलाकार अंजीर के फल के समान होते हैं तथा ये गुच्छों में होते हैं। गूलर के कच्चे फल हरे रंग और पके फल लाल रंग के होते हैं। गूलर के फल को थोड़ा– सा दबाते ही वह फूट जाता है और इसमें सूक्ष्म कीटाणु भी पाए जाते हैं। इसलिए इसका फल खाते समय काफी ध्यान देने की जरूरत पड़ती है। गूलर के पेड़ के सभी अंगों में दूध भरा होता है और यदि इसके किसी भी भाग को धारदार चीज से काटते हैं तो उस भाग से दूध निकलने लगता है। इसका दूध जब शुरू–शुरू में निकलता है तो वह सफेद रंग का होता है लेकिन हवा के संपर्क में आते ही कुछ ही देर में पीला अथवा मटमैला हो जाता है। इसके दूध का उपयोग औषधियों के रूप में किया जाता है क्योंकि इसमें रोगों को ठीक करने की शक्ति होती है। गूलर के फल इसकी शाखाओं पर लगते हैं और झोपादार किस्म के दिखते हैं। यदि कच्चे फल को तोड़ा जाए तो उसमें से भी सफेद–सफेद दूध निकलता है।

गूलर शीतल, गर्भसंधानकारक, वृणरोपक, रूक्ष, कसैला, भारी, मधुर, अस्थिसंधानकारक एवं वर्ण को उज्ज्वल करने वाला है। यह कफ, पित्त, अतिसार तथा योनि रोग को नष्ट करने वाला है। गूलर घाव को भरने वाला, हड्डियों के रोगों को ठीक करने वाला होता है। गूलर की छाल बहुत ही ठंडी, दूध को बढ़ाने वाली, गर्भ के लिए लाभकारी और कठिन से कठिन घावों को भरने वाली होती है। गूलर के छोटे और मुलायम फल शीघ्रपतन को दूर करने वाले होते हैं। यह खून के स्राव को रोकने, उल्टी को बंद करने और प्रदर रोग ठीक करने वाला होता है। गूलर का अधिक बड़ा फल भूख को बढ़ाने वाला होता है तथा शरीर के मांस को बढ़ाने में यह लाभकारी है। गूलर की छाल अत्यंत शीतल, दुग्धवर्धक, कसैली, गर्भहितकारी और वर्णविनाशक है। जब इसके फल मध्यम आकार के होते हैं तो वे काफी कोमल होते हैं और उनका स्वाद शीतल एवं कसैला होता है। यूनानी चिकित्सकों के अनुसार गूलर दूसरे दर्जे में गर्म और पहले दर्जे में गीला होता है। यह आंखों के रोग, सीने के दर्द, सूखी खांसी, गुर्दे और तिल्ली के दर्द, सूजन, खूनी बवासीर, खून की खराबी,

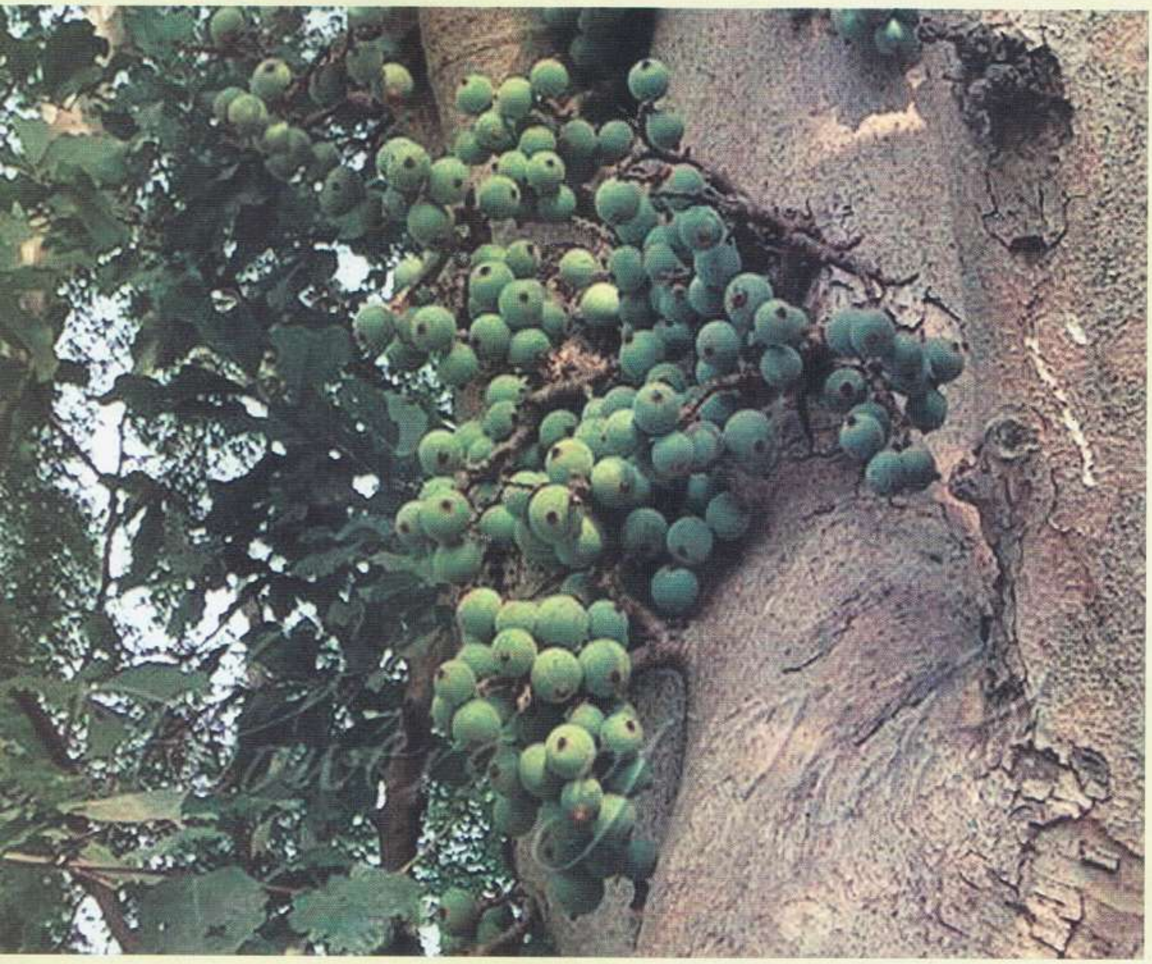

रक्तातिसार (खूनी दस्त), कमर दर्द एवं फोड़े-फुंसियों को ठीक करने में लाभकारी होता है।

गूलर की छाल

गूलर की छाल की प्रकृति ठंडी होती है। इसके छाल में दूध भरा रहता है तथा यह स्वाद में फीकी होती है। यह गर्भ के लिए लाभकारी तथा घावों को भरने वाली होती है। गूलर की छाल को सुखाकर रख दिया जाता है और फिर उसको पानी में भिगोकर उसके पानी से सिर धोने पर सिरदर्द में आराम मिलता है और बाल साफ और चमकीले रहते हैं।

गूलर की सब्जी

गूलर के अधपके फल की सब्जी बनाई जाती है। इसकी सब्जी स्वादिष्ट एवं स्वास्थ्यवर्धक होती है। प्राचीनकाल में जंगलों के बीच रहने वालों के लिए यह सबसे महत्वपूर्ण खाद्य पदार्थ था। इसके पके फल को खाने के साथ ही कच्चा रखने पर उसे भूनकर भी खाया जाता था। आयुर्वेद के अनुसार गूलर की सब्जी खाना कई तरह की बीमारियों को दूर भगाता है। गूलर की सब्जी स्वादिष्ट होने के साथ ही पाचनतंत्र के लिए काफी लाभदायक है।

गूलर के घरेलू उपयोग

मंदाग्नि उपयोग – मंदाग्नि रोगों में गूलर का शर्बत काफी उपयोगी माना जाता है। इससे भूख बढ़ती है। पाचन क्रिया ठीक रहती है और स्वास्थ्य ठीक हो जाता है। शर्बत बनाने के लिए पके हुए गूलर के फल को पीस लिया जाता है और फिर उसके गूदे का हल्की-सी मिश्री के साथ शर्बत तैयार किया जाता है।

चेचक – यदि किसी बच्चे को चेचक निकल आए और उसका शरीर बुरी तरह तप रहा हो तो गूलर के रस में मिश्री डालकर पिलाने से आराम मिलता है। इससे चेचक की गर्मी कम हो जाती है।

हैजा – गूलर पत्ते का रस हैजे में काफी उपयोगी माना जाता है। हैजे के लक्षण दिखते ही पीड़ित को गूलर का शर्बत पिलाना चाहिए। इसके अलावा गूलर के फल को पीस कर उसमें हींग मिलाकर गोली बना ले और फिर उस गोली को प्रयोग करने से फायदा मिलता है। कई बार हैजे की चपेट में पूरा परिवार और बस्ती आ जाती है। ऐसे में यदि एक व्यक्ति में हैजे के लक्षण दिखे तो उसके संपर्क में रहने वाले दूसरे लोगों को भी गूलर का शर्बत पिला देना चाहिए।

रक्तपित्त (खूनी पित्त) – पके हुए गूलर गुड़ या शहद के साथ खाने चाहिए अथवा गूलर की जड़ को घिसकर चीनी के साथ खाने से लाभ मिलता है और रक्तपित्त दोष दूर हो जाएगा। हर प्रकार के रक्तपित्त में गूलर की छाल 5 ग्राम से 10 ग्राम तथा उसका फल 2 से 4 ग्राम तथा गूलर का दूध 10 से 20 मिलीलीटर की मात्रा में सेवन करने से लाभ मिलता है।

अंग जकड़न – गूलर का दूध जकड़न वाले अंग पर लगाकर इस पर रूई चिपकाएं इससे लाभ मिलेगा। साथ ही गूलर के पत्ते को हल्का गरम करके बांधने से भी फायदा मिलता है।

घाव व फोड़े-फुंसी – गूलर घाव को भरने में काफी लाभकारी

साबित होता है। यदि शरीर के किसी हिस्से में घाव हो जाए तो गूलर का दूध लगाने से फायदा मिलता है। फोड़े पर गूलर का दूध लगाकर उस पर पतला कागज चिपकाने से फोड़ा जल्दी ठीक हो जाता है। इसी तरह घाव अथवा फोड़े में गूलर का कल्फ काफी फायदेमंद होता है। घाव व फोड़े पर गूलर के पत्तों का कल्फ पीसकर लेप करना चाहिए। इससे मवाद बनने की संभावना खत्म हो जाती है और धीरे–धीरे घाव सूख जाता है। शरीर के अंगों में घाव होने पर गूलर की छाल के पानी से उसे धोना चाहिए। गूलर के पत्तों को छाया में सूखाकर इसे पीसकर बारीक चूर्ण बना लें। इसके बाद घाव को साफ करके इसके ऊपर इस चूर्ण को छिड़कने से भी फायदा मिलता है। इस चूर्ण में से 5–5 ग्राम की मात्रा सुबह तथा शाम को पानी के साथ सेवन करें इससे लाभ मिलेगा।

जलन – यदि आग से शरीर का कोई भी हिस्सा जल गया हो तो गूलर के पत्तों का लेप करना चाहिए। इससे काफी आराम मिलता है। जलन नहीं होती और फफोले भी नहीं पड़ते हैं। यदि फफोले पड़ भी जाएं तो वे जल्द ही ठीक हो जाते हैं।

अतिसार – अतिसार में भी गूलर काफी उपयोगी है। मट्ठे के साथ गूलर के तीन–चार बड़े पत्तों को पीसकर उसमें काली मिर्च के दो दाने और काला नमक मिलाकर पीने से आराम मिलता है। इसके अलावा गूलर की 4–5 बूंद दूध को बताशे में डालकर दिन में 3 बार सेवन करने से अतिसार (दस्त) के रोग में लाभ मिलता है। आंव या अतिसार (दस्त) में गूलर की जड़ के चूर्ण को 3 से 5 ग्राम की मात्रा में ताजे फल के साथ दिन में दो बार सेवन करने से भी लाभ मिलता है। गूलर की 10 ग्राम पत्तियों को बारीक पीसकर 50 ग्राम पानी में डालकर रोगी को पिलाने से सभी प्रकार के दस्त समाप्त हो जाते हैं। बच्चों के अतिसार (दस्त) तथा रक्तातिसार (खूनी दस्त), वमन (उल्टी) और कमजोरी में गूलर का दूध 10 बूंद सुबह और शाम दूध में मिलाकर सेवन कराएं इससे लाभ मिलता है। 10 से 20 ग्राम गूलर के दूध को बताशे मिलाकर खाने से रक्तातिसार (खूनी दस्त) की बीमारी समाप्त हो जाती है।

गर्भवती स्त्री – गूलर की जड़ का पानी गर्भवती स्त्री को सेवन कराएं इससे उसका अतिसार रोग ठीक हो जाता है। पके हुए कीड़े रहित गूलरों में पिसी हुई मिश्री डालकर सुबह के समय खाने से गर्मी में राहत मिलती है। गूलर के दूध में चीनी डालकर पीने से गर्मी से मुक्ति मिलती है।

मुंह के छाले – गर्मी के कारण जीभ पर छाले होने पर गूलर के कांटे और मिश्री को पीसकर सेवन करने से लाभ मिलता है। गूलर के पत्ते को चबाने से भी मुंह के छाले ठीक हो जाते हैं। यदि फल मिले तो उसका दिन में दो बार सेवन करने से दो–तीन दिन में मुंह के छाले ठीक हो जाते हैं।

बिच्छू का जहर – गूलर बिच्छू का जहर कम करने में काफी कारगर माना गया है। यदि किसी को बिच्छू डंक मार दे तो गूलर के अंकुरों को पीसकर उस स्थान पर लगाएं, जहां डंक लगा हो। इससे जहर चढ़ता नहीं है और दर्द से आराम मिलता है।

कान का दर्द – यदि किसी के कान में दर्द हो रहा हो तो गूलर और कपास के दूध को मिलाकर कान पर लगाने से कान का दर्द ठीक हो जाता है।

दंत रोग – जिस डंठल में गूलर के फल लगते हैं उसे दातून के काम में लेने से दांत के कई रोग दूर हो जाते हैं। जिसके दांत हिलते हैं और दांतों से खून आता हो वे खड़िया मिट्टी, खैर को गूलर के पत्तों के रस में मिला लें। फिर उसमें थोड़ा–सा सपूर मिलाकर मुंह साफ करें। इससे दांत चमकीले हो जाते हैं और दांत से संबंधित तमाम बीमारियां दूर भागती हैं। मसूड़ों से खून आना बंद हो जाता है।

खांसी – यदि किसी को सूखी खांसी आ रही हो तो मुलेठी को धोकर सुखाक़र चूर्ण बना लें और उसके बराबर ही गूलर के पत्तों का चूर्ण मिलाकर छोटी गोलियां बना ले। इसे मुंह में रखकर चूसने से खांसी में काफी फायदा मिलता है। यदि रोगी को बहुत तेज खांसी आती हो तो गूलर का दूध रोगी के मुंह के तालू पर रगड़ने से आराम मिलता है। गूलर के फूल, काली मिर्च और ढाक की कोमल कली को बराबर मात्रा में लेकर पीसकर चूर्ण बना लें। इस चूर्ण को 5 ग्राम शहद में मिलाकर रोजाना 2–3 बार चाटने से खांसी ठीक हो जाती है।

श्वेत प्रदर – श्वेत प्रदर की शिकायत हो तो प्रतिदिन गूलर का फल खाने से काफी फायदा मिलता है। गूलर का रस 5 से 10 ग्राम मिश्री के साथ मिलाकर नाभि के निचले हिस्से में पूरे पेट पर लेप करने से भी फायदा मिलता है। श्वेत प्रदर होने पर गूलर की सब्जी खाना भी लाभकारी रहता है। 10–15 ग्राम गूलर की छाल को पीसकर 250 ग्राम पानी में डालकर पकाएं। पकने के बाद 125 ग्राम पानी शेष रहने पर इसे छान लें और इसमें मिश्री व लगभग 2 ग्राम सफेद जीरे का चूर्ण मिलाकर सुबह–शाम सेवन करें तथा भोजन में इसके कच्चे फलों का काढ़ा बनाकर सेवन करने से भी श्वेत–प्रदर ठीक हो जाता है।

गर्भपात रोकना – यदि किसी महिला को बार–बार गर्भपात की समस्या हो, गर्भ नहीं ठहर रहा हो तो उसे गूलर का फल खूब खाना चाहिए। यदि गर्भावस्था के दौरान रक्तस्राव की शिकायत हो तो गूलर की छाल अथवा फल पीसकर इसमें चीनी मिलाकर दूध के साथ सेवन करें। जब तक रोग के लक्षण दूर न हो तब तक इसको 4 से 6 घंटे पर उपयोग में ले। गूलर की जड़ अथवा जड़ की छाल का काढ़ा बनाकर गर्भवती स्त्री को पिलाने से गर्भस्राव अथवा गर्भपात होना बंद हो जाता है।

वीर्य रोग – गूलर का दूध बताशे में खाने से वीर्य शुद्ध होता है। गूलर का चूर्ण शहद या सेंधा नमक के साथ खाने से भी फायदा मिलता है। छुहारे की गुठली निकालकर उसमें गूलर के दूध की 25 बूंद भरकर सुबह रोजाना खाने से वीर्य में शुक्राणु बढ़ते हैं तथा संतानोत्पत्ति में शुक्राणुओं की कमी का दोष भी दूर हो जाता है।

रक्तस्राव – शरीर में कहीं चोट लगने पर अथवा नाक से

रक्तस्राव हो रहा हो तो गूलर के पत्तों का रस निकालकर वहां पर लगाएं इससे तुरन्त खून का आना बंद हो जाता है।

दमा – दमा के मरीजों के लिए गूलर काफी उपयोगी साबित हुआ है। गूलर के पेड़ की छाल उतारकर छाया में सुखा लें और इसे पीसकर चूर्ण बना लें और फिर इसे छानकर बोतल में भरकर ढक्कन लगाकर रख दें। इस चूर्ण का सेवन प्रतिदिन करने से दमा रोग में लाभ मिलता है।

आंव (पेचिश) – आंव की शिकायत होने पर गूलर की जड़ से रस निचोड़े और उसे सुबह–शाम सेवन करें। इसके अलावा गूलर के तने पर किसी नुकीली चीज से वार करें फिर उससे निकलने वाले दूध को बताशे पर रोप लें। फिर गूलर से सने बतासे खाने से भी फायदा मिलता है।

आंखों के रोग – गूलर के पकने के दिनों में इसके एक–दो फल नियमित रूप से दो हफ्ते तक खाए जाएं तो कई प्रकार के आंखों के रोगों से बचा जा सकता है। जिन लोगों को ज्योति संबंधी शिकायत हो, उन्हें गूलर का फल जरूर खाना चाहिए।

गूलर की लकड़ी का उपयोग – कुंआ खोदते वक्त सबसे पहले तली में गुलर की लकड़ी लगाई जाती है, जिसके ऊपर ईंटों की चिनाई की जाती है। क्योंकि गूलर की लकड़ी सैंकड़ों सालों तक पानी और मिट्टी में जस की तस बनी रहती है। इस पर किसी तरह का प्रभाव नहीं पड़ता है। यही वजह है कि कुएं में सबसे पहले गूलर की लकड़ी का प्रयोग किया जाता है और फिर उसी लकड़ी पर बने व्यास पर ईट से दीवार तैयार की जाती है।

गूलर के फल में पाए जाने वाले प्रमुख तत्व

वैज्ञानिक मतों के अनुसार गूलर के फल में कई महत्वपूर्ण तत्व पाए जाते हैं। इसके फल में फास्फोरस व सिलिका भी पाया जाता है, लेकिन उसकी मात्रा काफी कम है। इसकी छाल में 14 प्रतिशत टेनिन और दूध में 4 से 7.4 प्रतिशत तक रबड़ होता है। गूलर में पाए जाने वाले प्रमुख तत्व निम्नलिखित हैं–

कार्बोहाइड्रेट	49 प्रतिशत
रंजक द्रव्य	8.5 प्रतिशत
भस्म	6.5 प्रतिशत
अलब्युमिनायड	7.4 प्रतिशत
वसा	5.6 प्रतिशत
आर्द्रता	13.6 प्रतिशत

गूलर के प्रयोग में बरती जाने वाली सावधानी

गूलर का अधिक मात्रा में सेवन करने से बुखार पैदा हो सकता है। गूलर का पका फल खाने में मीठा लगता है। मीठा होने के कारण इसमें कीड़े आसानी से लग जाते हैं। इसका सेवन करने से पहले इसे अच्छी तरह से देख लें कि कहीं इसमें कीड़े तो नहीं हैं। यदि कीड़े लगे हों तो उन्हें निकालकर गूलर के सही भाग को सुखाकर उपयोग में लेना चाहिए।

(लेखक स्वतंत्र पत्रकार हैं)

कुरुक्षेत्र मंगवाने का पता
विज्ञापन और प्रसार प्रबंधक
प्रकाशन विभाग
पूर्वी खंड-4, तल-7
रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066

मूल्य एक प्रति	:	10 रुपये
वार्षिक शुल्क	:	100 रुपये
द्विवार्षिक	:	180 रुपये
त्रिवार्षिक	:	250 रुपये
विदेशों में (हवाई डाक द्वारा)		
पड़ोसी देशों में	:	530 रुपये (वार्षिक)
अन्य देशों में	:	730 रुपये (वार्षिक)

AN ISO 9001:2008 CERTIFIED INSTITUTE

There is no holiday in moral life.

★सर्वोत्कृष्ट संस्थान ★सर्वोत्कृष्ट नोट्स
★सर्वोच्च रैंक ★सर्वोच्च अंक...

लोक प्रशासन

(हिन्दी माध्यम)

By **Atul Lohiya**

(A person who believes in scientific approach and hard work)

Dynamic Approach for Dynamic Subject

- Special **Audio-Visual Class** on each & every Hot topics
- **200 Hours Lecture** and **Discussion**
- Computerised **Current updated best Study Material** on each and every topic
- **Case Studies, Flow Chart, Diagram, IIPA** Journal based lecture and study material
- Revision notes with **Chart and Diagram**
- **Daily Test** and **News Paper** analysis
- Unit wise **Answer Formating** of UPSC Questions (Last 10 years)
- Complete Coverage of Syllabus & **100% Syllabus (Ist & IInd Paper)** by **Atul Lohiya**

* *UPSC के साथ UP, MP, Raj., Bihar, Uttaranchal, Jharkhand Chhattisgarh, Haryana, Himachal PCS की भी तैयारी;*

संस्थान के सफल विद्यार्थियों द्वारा समय-समय पर मार्गदर्शन!

पत्राचार पाठ्यक्रम भी उपलब्ध

(पूर्णतः संशोधित; परिमार्जित एवं परिवर्धित कम्प्यूटराइज्ड नोट्स)

MAINS - 7500/- • MAINS + PRE. - 8500/-

डाक खर्च - 300/- अतिरिक्त

लोक प्रशासन

वर्तमान और भविष्य के लिए एकमात्र सुरक्षित विषय

सामान्य अध्ययन हिन्दी माध्यम

अतुल लोहिया एवं विशेषज्ञ समूह

- ★ मुख्य सह प्रारंभिक परीक्षा हेतु 11 महीने (7+4) का आधारभूत कक्षा कार्यक्रम (Basic to Advance Level)
- ★ सामान्य अध्ययन के संपूर्ण पाठ्यक्रम पर अद्यतन पाठ्य सामग्री विश्लेषणात्मक एवं बिंदुवार नोट्स के रूप में
- ★ समसामयिक घटनाक्रम के प्रत्येक विषय खंड पर संबंधित विषय विशेषज्ञों द्वारा पाक्षिक कक्षा (अद्यतन नोट्स के साथ)
- ★ सार्वजनिक जीवन से जुड़े प्रसिद्ध व्यक्तियों द्वारा समय-समय पर अतिथि व्याख्यान
- ★ जटिल विषयों की बोधगम्य व सरल प्रस्तुति हेतु ऑडियो-विजुअल माध्यमों का प्रयोग
- ★ प्रत्येक अध्याय की समाप्ति पर विगत वर्षों की मुख्य व प्रारंभिक परीक्षा के प्रश्नों पर चर्चा एवं उत्तर प्रारूप की प्रिंटेड कॉपी
- ★ साप्ताहिक जाँच परीक्षा एवं उस पर चर्चा

नया बैच : 17 जून

लोक प्रशासन (हिन्दी माध्यम) का सर्वोच्च संस्थान -

सर्वोच्च अंक (गिरिवर दयाल सिंह)	सर्वोच्च अंक (मिहिर रायका)
390	**370**
(183/207)	**(179/191)**

आप भी प्राप्त कर सकते हैं 400+ अंक, कैसे? Winning Strategy के साथ

New Batch

31 May(Morning) & **14 June**(Evening)

Admission Open : 3rd May - 15th May

'अतुल लोहिया'

शिक्षक; मार्गदर्शक और मित्र भी

"PRABHA"

DOUBTLESS KNOWLEDGE, DESIRELESS SERVICE

प्रभ

AN INSTITUTE OF PUBLIC ADMINISTRATION

HEAD OFFICE : 105, VIRAT BHAWAN (MTNL BLDG.), NEAR BATRA CINEMA, MUKHERJEE NAGAR, DELHI-110009.
CLASS ROOM : 702, ABOVE MEERUT WALE SWEETS, MAIN ROAD MUKHERJEE NAGAR, DELHI-110009.
Phone : 27653498, 27655134. Cell.: 9810651005, 8010282492

सफाईकर्मी महिला ने रचा इतिहास

सुमन यादव

यह सफलता की कहानी एक ऐसी महिला की है, जो कभी सिर पर मैला ढोने और गलियों में साफ-सफ़ाई करने में लगी थी, लेकिन आज वह एक सम्मानजनक जीवन जी रही है। वह भारत के साथ ही देश-दुनिया में भी जाकर अपनी तरक्की की कहानी बयां कर रही है। न्यूयार्क, फ्रांस सहित विभिन्न स्थानों पर आयोजित होने वाले सम्मेलनों में इस महिला को आदर्श के रूप में बुलाया जाता है और जब वह अपनी कहानी बयां करती है तो लोग आश्चर्य में पड़ जाते हैं लेकिन उनकी जीवनगाथा सिर्फ कौतूहल का विषय नहीं बल्कि एक सच्चाई है।

सफलता की कहानी रची है उषा चाउमार ने जिन्हें यूपीए अध्यक्ष सोनिया गांधी, राष्ट्रपति प्रतिभा देवी सिंह पाटील, लोकसभा अध्यक्ष मीरा कुमार सहित तमाम हस्तियां सम्मानित कर चुकी हैं। उषा फ्रांस में सम्मेलन को संबोधित कर चुकी हैं तो उन्हें न्यूयार्क स्थित संयुक्त राष्ट्र मुख्यालय भी जाने का मौका मिला। यहां उन्होंने हॉलीवुड और बॉलीवुड की जानी–मानी हस्तियों के साथ रैंप पर कैटवॉक भी किया।

भारत के गांवों में और इसी समाज के बीच प्रतिभाओं की खान है। बस जरूरत है उन्हें पहचानने और तराशने की। कुछ प्रतिभाएं तलाश कर तराशी जा रही हैं और कुछ की खोज जारी है। ऐसी ही एक प्रतिभा हैं उषा चाउमार। उषा को तराशने का काम किया है सुलभ इंटरनेशनल ने। लेकिन अब वह पूरे देश की महिलाओं के लिए आदर्श साबित हो रही हैं। अलवर की उषा चाउमार पहले मैला ढोने के काम में लगी थीं वही आज महिलाओं के बीच तरक्की की नई मिसाल बन गई हैं। वह खुद के साथ ही आसपास की तमाम महिलाओं को बेहतर जीवन जीने की सीख दे रही हैं। अपनी सक्रियता के दम पर उषा ने भारत ही नहीं बल्कि पूरी दुनिया में भारत का नाम रोशन किया है। उषा के काम और उसकी सक्रियता को लेकर किताबें लिखी गई हैं।

उषा का जन्म भरतपुर के डीग में एक साधारण परिवार में हुआ। परिवार और कुनबे की दूसरी महिलाओं के साथ ही उषा भी काम में लग गई। सुबह होते ही महिलाएं घर से बाहर निकल जाती थी और मैला ढोने, साफ–सफाई आदि के काम में लग जाती थीं। साफ–सफाई के काम में उन्हें इतनी मजदूरी भी नहीं मिलती थी कि जीवन का गुजारा आराम से हो सके। मुफलिसी में जीवन जी रही थीं। इसलिए स्कूल जाने के बजाय काम–धंधे में ही बचपन बीत गया। परिवार के दूसरे सदस्यों ने जिस तरह से इस काम को अपनी नियति मान लिया था, उषा ने भी न चाहते हुए उसे अपना लिया। बाद में उनकी शादी अलवर के हजूरी मोहल्ला में हुई। यहां आने के बाद वह अपनी सास के साथ इसी काम में लग गई। वह बताती है कि उन्हें यह बात बहुत अखरती थी कि क्यों वह दूसरी महिलाओं की तरह बेहतर जिंदगी नहीं जी सकती हैं। जब एक महिला पढ–लिख कर अच्छा काम कर सकती है और दूसरे छोटे–मोटे कारोबार करके जीवनयापन कर सकती है तो वह इस साफ–सफाई के काम में क्यों लगी हैं? वह भी इससे अलग कुछ कामधंधा कर सकती हैं। यह सवाल वह अक्सर अपने आप से करती और यही सवाल उन्हें आज देश–विदेश में महिला हितों के मागदर्शक के रूप में ख्याति दिला रहा है।

बीते दिनों को याद करते हुए उषा कहती हैं कि उनके मोहल्ले में ही एक मंदिर था, लेकिन छुआछुत की वजह से वे लोग न तो मंदिर जाते थे और न ही भजन गा सकते थे। इस पाबंदी की वजह से उन्हें बहुत दुख होता था। वे लोग पूजा–पाठ के लिए काफी दूर जाते थे, जहां कोई उन्हें पहचानता नहीं था। ऐसे में उन्हें मंदिर में प्रवेश भी मिल जाता था और वह पूजा–पाठ कर लेती थी। लेकिन मन में बहुत दर्द रहता। यह दुख होता कि जो वह काम करती हैं, उसकी वजह से उनके साथ भेदभाव किया जा रहा है। फिर वह यह काम क्यों नहीं छोड़ देती? उषा बताती है कि जब उन्हें कोई भंगन या जमादारिन कहता था तो

भी उन्हें बहुत दुख होता था। पानी पीने के लिए कोई अपना गिलास नहीं देता था। यदि कोई पानी पिलाता तो ऊपर से गिराता ताकि गिलास से स्पर्श न हो जाए। यह बात भी बहुत खलती थी। इस व्यवहार की वजह से मैं खुद कोशिश करती कि किसी का सामना न हो और किसी से पानी न मांगना पड़े। क्योंकि जिस तरह की परंपरा थी, उसमें मैं अपने आप को बहुत अपमानित महसूस करती थी।

उषा बताती है कि इन दुख भरी कहानियों के बीच उनके जीवन में एक नया सवेरा आया। सुलभ इंटरनेशनल के डा. विंदेश्वरी पाठक उनके इलाके में आए। उन्होंने महिलाओं से बातचीत की और कहा कि वे यह काम क्यों करती हैं? पहले तो हमें उनकी बात समझ में नहीं आई। क्योंकि यह पहला मौका था, जब कोई उन्हें इस काम से रोक रहा था। वह याद करती है और बताती हैं कि संभवतः 23 अप्रैल 2003 का वह दिन था, जब डा. पाठक उनके मोहल्ले में आए और उनके परिवार के पुरुषों से बात की। करीब एक हजार से अधिक लोगों की भीड़ के बीच उन्होंने समझाया कि किस तरह से जीवन को सुधारा जा सकता है और इस अस्पृश्यता के काम से मुक्ति पाई जा सकती है। उन्होंने पूछा कि क्या वे अलग तरह का काम करना चाहती हैं। उनके इस सवाल को उषा ने लपक लिया और तुरंत हामी भर दी। इसके बाद उन्हें दिल्ली बुलाया गया। जहां कुछ ऐसे काम बताए गए, जो गांव में ही रहकर किए जा सकते थे। फिर सुलभ इंटरनेशनल की अलवर में स्थापित शाखा नई दिशा से उनका संपर्क हुआ। इस संपर्क ने तो उषा की जिंदगी ही बदल दी। यहां आने के बाद उन्हें जीवन के मायने समझ में आए और फिर शुरू हुई एक नई जिंदगी, नई पहल के साथ।

नई दिशा में मिली ट्रेनिंग

सुलभ से संपर्क होने के बाद उन्हें उसके व्यावसायिक केंद्र नई दिशा अलवर भेज दिया गया। यहां उन्हें ब्यूटीशियन की ट्रेनिंग दी गई। इसके अलावा विभिन्न तरह के अचार–पापड़ बनाने के तरीके भी सिखाए गए। इसी तरह चिकन कसीदा, सिलाई–कढ़ाई के बारे में भी प्रशिक्षण दिया गया। इस प्रशिक्षण को हासिल करते समय उन्हें और उनके साथ मौजूद दूसरी महिलाओं को बेहद खुशी हुई। ऐसा लग रहा था कि जो सपना बचपन से देख रही हैं वह अब पूरा होने को है। दूसरी तरफ मन में यह बात भी थी कि बस रास्ते मिलने की जरूरत है। कोई भी काम कठिन नहीं होता और न ही कोई काम किसी का पुश्तैनी है, बस करने की जरूरत है और माध्यम मिलने भर की देर है।

अब खुद भरती हैं बैंक की रसीद

उषा बताती है कि नई दिशा केंद्र से जुड़ने के पहले तक वह निरक्षर थी। लेकिन यहां उन्हें वयस्क साक्षरता कार्यक्रम के तहत पढ़ना–लिखना सिखाया गया। पहले जहां वह अपना नाम तक नहीं लिख पाती थी वहीं अब बैंक में पैसा जमा करने अथवा निकालने के लिए खुद ही स्लीप भरती हैं। चेक भी खुद से जमा करती हैं और किसी को पैसा देना होता है तो खुद चेक भर कर संबंधित व्यक्ति को थमाती हैं। उनकी इस पहल को अब बैंक के लोग भी बहुत सम्मान देते हैं और जब बैंक जाती हैं तो दूसरी निरक्षर महिलाओं को उनके जैसा बनने की सीख देते हैं। जब बैंक स्टॉफ उन्हें मेडम कहकर बुलाता है तो बहुत खुशी होती है और मैं भी उन्हें थैंक्स कहना नहीं भूलती हूं।

स्वयंसहायता समूह का गठन

ट्रेनिंग लेने के बाद उषा ने साफ–सफाई का काम छोड़ दिया और नई दिशा केंद्र की ओर से बताई गई बातों के अनुरूप कुछ महिलाओं को साथ जोड़ा और स्वयंसहायता समूह का गठन कर डाला। पहले तो अपने साथ की महिलाओं को समझाने में काफी दिक्कत हुई, लेकिन धीरे–धीरे महिलाओं ने उनकी बात को सुना और इस उम्मीद के साथ उनसे जुड़ गई कि मेहनत तो हर काम में करनी है तो फिर गंदा काम क्यों किया जाए। स्वयंसहायता समूह बनने के बाद समय–समय पर नई दिशा केंद्र की ओर से उन्हें प्रशिक्षण दिया गया। इस प्रशिक्षण का असर यह हुआ कि आज वह महिलाओं के बीच एक मॉडल के रूप में सामने आई हैं। वह खुद आत्मनिर्भर बनने के साथ ही साथ की तमाम महिलाओं को आत्मनिर्भर बनाने में अपना योगदान दे रही हैं। समूह से जुड़ी हर महिला एक–दूसरे का पूरा ख्याल रखती हैं। इससे उनमें सहयोगात्मक भावना का भी विकास हुआ है। स्वयंसहायता समूह चांदनी और सूरज नाम से उनके साथ जुड़ी महिलाएं काम कर रही हैं। हजूरी मोहल्ला में उन्होंने एक कार्यालय भी खोल लिया है। जहां आसपास से आने वाली महिलाओं को ब्यूटी टिप्स देती हैं और सिलाई–कढ़ाई आदि का प्रशिक्षण भी देती हैं। उनके समूह की ओर से बनाए जाने वाले अचार और पापड़ पूरे अलवर ही नहीं दूसरे शहरों में भी बिकते हैं। वह कहती है कि जब ट्रेडर्स उनके मोहल्ले में आते हैं और अचार–पापड़ सहित अन्य सामग्री का आर्डर देते हैं और सीधे बातचीत करके भाव तय करते हैं बहुत अच्छा लगता है। उनके समूह की ओर से बनाई जाने वाली सेवई और पापड़ पूरे इलाके में प्रसिद्ध हैं।

सभी के हितों का ध्यान

उनके समूह की महिलाओं ने सेल्फ फाइनेंस सिस्टम भी

विकसित किया है। वे हर माह बैंक में कम से कम सात सौ रुपये जरूर जमा करती हैं। इस पैसे को वह आपसी सहयोग के लिए रखती हैं। यदि समूह से जुड़ी किसी महिला को आर्थिक जरूरत होती है तो इसी पैसे से उसकी जरूरत के मुताबिक मदद की जाती है। इसके अलावा दो सौ रुपये हर माह एक समिति में जमा करती हैं। वह बताती है कि वे हर माह कम से कम 18 सौ रुपये कमा लेती हैं और इस पैसे में से एक बड़ा हिस्सा बैंक में जमा करती हैं। क्योंकि गृहस्थी का खर्चा उनके पति की कमाई से चलता है और जो पैसा वह कमाती है उसे बच्चों की पढ़ाई के लिए जुटा रही हैं।

परिवार की जिम्मेदारी भी निभाई

आज उषा का भरा–पूरा परिवार है। वह अपने परिवार के सदस्यों के साथ खुश हैं। जब से उन्होंने समूह के जरिए काम करना शुरू किया है, उनके रहन–सहन में काफी बदलाव आया है। आज उनका बेटा 12वीं क्लास में पढ़ रहा है और बेटी कक्षा 11 में है। दोनों को अपनी मां पर गर्व है। दोनों बच्चों की परवरिश अच्छी तरीके से हो रही है। उषा की चाहत है कि वह अपने दोनों बच्चों को उच्च शिक्षा दिलाए, ताकि वे उससे भी बेहतर जीवन जी सकें। उषा का मानना है कि शिक्षा ही विकास के लिए सबसे महत्वपूर्ण है। इसलिए उनका पूरा ध्यान अपने बच्चों को अच्छी से अच्छी शिक्षा दिलाने पर है। वह कहती हैं कि मैं बेटे की तरह ही बेटी को भी कुछ बनाना चाहती हूं। ताकि जिस तरह से वह इस वक्त अपनी मां पर गर्व करती है वैसा ही भविष्य में भी करती रहे। हर मां–बाप की जिम्मेदारी होती है कि वह अपने बच्चों को अच्छी से अच्छी शिक्षा दिलाए। यही जिम्मेदारी वह पूरी करना चाहती हैं।

धन्यवाद देना नहीं भूलती

वह कहती हैं कि डॉ. विन्देश्वर पाठक जी के नेतृत्व में सुलभ ने साफ–सफाई और समाज–सुधार आन्दोलन में काफी योगदान दिया है। उनके जैसी महिलाओं का जीवन सुधारने में सुलभ की भूमिका सबसे महत्वपूर्ण रही है। इसके लिए वह लगातार सुलभ और इससे जुड़े लोगों को धन्यवाद देती हैं। साथ ही यह भी चाहती हैं कि यह अभियान आगे भी चलता रहे जिससे उनके जैसी दूसरी महिलाओं का भी जीवन सुधर सके और वे भारत ही नहीं पूरी दुनिया में जाकर नाम रोशन कर सकें। वह बताती हैं कि सुलभ ने करीब एक लाख से ज्यादा लोगों को वैकल्पिक रोजगार चुनने में और मैला ढोने की सामाजिक बुराइयों को दूर करने में मदद की है। वह खुद सुलभ की अहसानमंद हैं साथ ही उनके जैसी हर महिला सुलभ का अहसान मानती है और इस प्रयास को आगे बढ़ाने में अपनी भूमिका निभाने को तैयार है।

पूरा गांव करता है तारीफ

उषा ने जिस तरह से संघर्ष किया और सुलभ के सहयोग से कामयाबी हासिल की उससे उसके परिवार के दूसरे सदस्य ही नहीं बल्कि अब पूरा गांव भी उषा की तारीफ करता है। उषा की इस पहल के बाद गांव की महिलाओं को एक नया रास्ता मिल गया है। वे भी उषा की तरह कड़ी मेहनत और सक्रियता दिखाकर कुछ अलग और नया करना चाहती हैं। इसका प्रमाण है उषा के गांव में तेजी से बढ़ती महिला स्वयंसहायता समूहों की संख्या। उषा ने एक समूह से शुरुआत की थी, लेकिन अब उसके मोहल्ले के साथ ही आसपास के गांवों की महिलाएं भी स्वयंसहायता समूह बनाकर अपनी जीविका चला रही हैं।

न्यूयार्क में मिला ताज

उषा बताती है कि सुलभ इंटरनेशनल 'नई दिशा' केंद्र ने उनकी जिंदगी के मायने ही बदल दिए हैं। सुलभ की पहल पर

उनके समूह को मिशन सेनिटेशन में न्यूयार्क में ताज मिला तो बहुत खुशी हुई। न्यूयार्क में आयोजित कार्यक्रम के दौरान हॉलीवुड और बालीवुड की प्रमुख हस्तियों के साथ रैंप पर कैटवॉक करने का अलग ही अनुभव रहा। ऐसा लगा कि उनके जीवन का सपना पूरा हो गया है। जहां लोग अस्पृश्य निगाह से देखते थे वहीं आज इतना बड़ा सम्मान मिल रहा है, यह सोचकर ही मैं प्रफुल्लित हो जाती हूं। उषा बताती हैं कि इस ताज को हासिल करने के बाद जब हम लोग भारत लौटे तो यहां जोरदार स्वागत हुआ। हम सभी लोग राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की समाधि पर गए। इतना सब कुछ देखने का मैंने सपना भी नहीं देखा था, लेकिन सुलभ और नई दिशा की वजह से जो बात कभी सपने में भी नहीं सोची थी आज वह हमारे सामने हकीकत में है। राष्ट्रपति महोदय से मिलने का भी अवसर मिला। इसी तरह फ्रांस की बंदरगाह नगरी मार्सिली में भी जाने का मौका मिला।

भविष्य की चाहत

उषा कहती है कि अपने परिवार के साथ ही वह यह भी चाहती हैं कि पूरे देश की लड़कियां अच्छी से अच्छी शिक्षा प्राप्त करें। जब लड़कियां पढ़ी–लिखी होंगी तो वे घर और समाज की तमाम समस्याओं का आसानी से समाधान कर लेंगी। पढ़ाई–लिखाई करने का यह मतलब कतई नहीं है कि सिर्फ नौकरी की जाए। पढ़ाई–लिखाई से संबंधित व्यक्ति का अपने आप विकास होता है। उसे तरह–तरह के रास्ते मिलते हैं। नौकरी न मिले तो भी वे अपने हुनर के जरिए जीवनयापन कर सकते हैं। वह कहती हैं कि जब लड़कियां पढ़ी–लिखी होंगी तो सरकार की ओर से मदद न मिले तो भी किसी कंपनी, कारखाने में काम करके बेहतर जिंदगी जी सकती हैं। वह यह भी कहती हैं कि अभी भी देश में महिलाओं को लेकर तमाम तरह की समस्याएं हैं। इसलिए वह चाहती है कि देश से सामाजिक बुराइयों का खात्मा हो जाए। सभी को बराबरी का दर्जा मिले। हमारे समाज में व्याप्त बालविवाह, दहेज, शराब और नशीली दवाइयों का सेवन सहित सभी तरह की कुरीतियां खत्म हो जाए। एक–दूसरे में किसी तरह का भेदभाव नहीं होना चाहिए। जब सब लोग मिल–जुल कर रहेंगे तो परिवार के साथ ही समाज का विकास होगा। इसलिए हर व्यक्ति को एक–दूसरे की मदद करनी चाहिए। अगर कोई गलत रास्ते पर जा रहा है तो उसे सुधारने की कोशिश करनी चाहिए।

(लेखिका महिला एवं बाल विकास विभाग से जुड़ी हैं)

हमारे आगामी अंक

जुलाई 2012 – ग्रामीण जनसंख्या का बदलता स्वरूप

अगस्त 2012 – ग्रामीण स्वास्थ्य

सितम्बर 2012 – ग्रामीण शिक्षा

अक्टूबर 2012 – भारत निर्माण (विशेषांक)

नवम्बर 2012 – उत्तर–पूर्व पर विशेष

सौर शहरों का आरम्भ

हमारा देश गहन और तेज विकास के दौर से गुजर रहा है, फलस्वरूप ऊर्जा की मांग बढ़ रही है। ऊर्जा की इस बढ़ती मांग का प्रमुख कारण है शहरीकरण और औद्योगिक विकास। पर साथ ही साथ स्वच्छ और हरित ऊर्जा के इस्तेमाल पर भी अधिक जोर दिया जा रहा है, ताकि ग्रीनहाउस गैस उत्सर्जन को कम किया जा सके। समय की मांग को ध्यान में रखते हुए नवीन और नवीकरणीय मंत्रालय ने 'सौर ऊर्जा शहरों का विकास' कार्यक्रम की शुरुआत की है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य स्थानीय नगर निकायों को अपने शहरों को नवीकरणीय ऊर्जा नगर अथवा सौर ऊर्जा शहर बनाने में मार्गदर्शन के लिए रोडमैप तैयार करने में सहायता एवं प्रोत्साहन देना है।

सौर ऊर्जा शहर कार्यक्रम का उद्देश्य नवीन और नवीकरणीय मंत्रालय के सभी प्रयासों को समाहित करना भी है जिससे शहरी क्षेत्रों की ऊर्जा समस्याओं को समग्र रूप से निपटाया जा सके। मंत्रालय के विभिन्न कदमों में निम्नलिखित बातें शामिल हैं– घरों, होटलों, छात्रावासों, अस्पतालों और उद्योगों में सोलर वाटर हीटिंग सिस्टम के इस्तेमाल को प्रोत्साहित करना, सौर इमारतों का प्रारूप तैयार करना, और ऊर्जा परियोजनाओं, शहरी तथा औद्योगिक अपशिष्ट के इस्तेमाल को प्रोत्साहित करना। एक सौर शहर में सभी तरह की नवीकरणीय ऊर्जा आधारित परियोजनाएं जैसे–सौर, वायु, जैव ईंधन, छोटी पनबिजली इकाइयों, अपशिष्ट से ऊर्जा उत्पादन आदि को शहरों की जरूरतों से स्थापित किया जाएगा। सौर शहर का लक्ष्य पारंपरिक ऊर्जा की संभावित मांग में कम से कम 10 प्रतिशत की कटौती करके नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों द्वारा ऊर्जा का उत्पादन बढ़ाना है। इसका मुख्य उद्देश्य स्थानीय सरकारों को नवीकरणीय ऊर्जा प्रौद्योगिकियों के इस्तेमाल के लिए प्रोत्साहित करना और ऊर्जा क्षमता बढ़ाने वाले उपायों को अपनाने के लिए प्रेरित करना है।

सौर ऊर्जा शहरों की पहचान का आधार जनसंख्या, नवीकरणीय ऊर्जा स्रोतों की क्षमता और ऊर्जा संरक्षण, स्थानीय सरकार और आम जनता तथा उद्योगों द्वारा इस क्षेत्र में किए जा रहे प्रयास हैं। शहरों की जनसंख्या 50 हजार से 50 लाख के बीच होनी चाहिए, हालांकि विशेष श्रेणी वाले राज्यों जैसे–पूर्वोत्तर और पर्वतीय राज्य, द्वीप तथा केन्द्रशासित प्रदेशों के मामले में इसमें रियायत रहेगी। 11वीं पंयवर्षीय योजना में सौर ऊर्जा शहरों के रूप में विकसित करने के लिए मदद हेतु 60 शहरों/कस्बों को चुना गया था। मंत्रालय ने प्रत्येक राज्य में कम से कम एक और अधिकतम पांच शहरों को इसके लिए चिन्हित किया था।

सौर ऊर्जा शहर कार्यक्रम का लक्ष्य

- शहरी स्तर पर ऊर्जा चुनौतियों से निपटने के लिए नगर की स्थानीय सरकारों को सशक्त एवं सक्षम बनाना।
- वर्तमान ऊर्जा स्थिति का आकलन, भविष्य की ऊर्जा आवश्यकता और कार्ययोजना पर मास्टर प्लान तैयार करने के लिए सहयोग देना।
- नागरिक समाज के सभी तबकों के बीच जागरुकता पैदा करना और स्थानीय नगर निकायों की क्षमता बढ़ाना।
- योजना प्रक्रिया में सभी पक्षों को शामिल करना।
- सरकारी–निजी भागीदारी द्वारा टिकाऊ ऊर्जा विकल्पों के क्रियान्वयन की निगरानी करना।

इस कार्यक्रम के द्वारा स्थानीय नगर निकायों को आर्थिक एवं तकनीकी सहायता दी जाएगी। स्थानीय सरकारों को मास्टर प्लान तैयार करने के लिए प्रोत्साहित किया जाएगा और इसके लिए संस्थागत व्यवस्था उपलब्ध कराई जाएगी। शहर के मास्टर प्लान में वर्ष 2008 के दौरान ऊर्जा की खपत, 2013 तथा 2018 में अपेक्षित ऊर्जा मांग को शामिल किया जाएगा, नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाओं के क्रियान्वयन हेतु कार्ययोजना तथा क्षेत्रवार रणनीति तैयार की जाएगी, ताकि शहर में जीवाश्म ईंधनों की खपत को कम किया जा सके। योजना में जागरुकता पैदा करने के लिए उपयुक्त कार्यकलाप शामिल किए जाएंगे।

आर्थिक सहायता

कार्यक्रम के अंतर्गत जनसंख्या के आधार पर तथा नगर परिषद अथवा प्रशासन द्वारा की जाने वाली पहल के निर्णय के आधार पर प्रत्येक शहर/कस्बे को 50 लाख रुपये तक की आर्थिक सहायता दी गई जिसका विवरण निम्नलिखित है–

- क्रियान्वयन योग्य कुछ विस्तृत परियोजना रिपोर्टों के साथ एक साल के भीतर मास्टर प्लान तैयार करने के लिए 10 लाख रुपये।
- सौर ऊर्जा प्रकोष्ठ के गठन और इसके तीन साल के लिए कार्य हेतु 10 लाख रुपये।
- तीन साल की अवधि के दौरान क्रियान्वयन के निरीक्षण हेतु 10 लाख रुपये।
- क्षमता निर्माण तथा तीन वर्ष में उपयोग में लाए जाने वाले अन्य प्रचार कार्यकलापों के लिए 20 लाख रुपये।

इसके अतिरिक्त नवीकरणीय ऊर्जा परियोजनाओं, प्रणाली तथा यंत्रों की स्थापना के लिए मंत्रालय द्वारा चलाए जा रहे अन्य विविध कार्यक्रमों के तहत उपलब्ध आर्थिक सहायता भी सौर ऊर्जा नगरों को दी जा सकती है।

20 शहरों के लिए मास्टर प्लान पहले ही तैयार किया जा चुका है। तीन शहर नागपुर, चंडीगढ़ और गांधीनगर मॉडल सौर ऊर्जा शहर के रूप में विकसित किए जा रहे हैं।

(पसूका से साभार)

आर. एन. आई. / 708 / 57
डाक–तार पंजीकरण संख्या : डी.एल. (एस)–05 / 3164 / 2012–14
आई.एस.एस.एन. 0971–8451, पूर्व भुगतान के बिना आर.एम.एस.
दिल्ली में डाक में डालने के लिए लाइसेंस : यू (डी.एन.)–54 / 2012–14

R.N.I./708/57
P&T Regd. No. DL (S)-05/3164/2012-14
ISSN 0971-8451, Licenced under U (DN)-54/2012-14
to Post without pre -payment at R.M.S. Delhi.

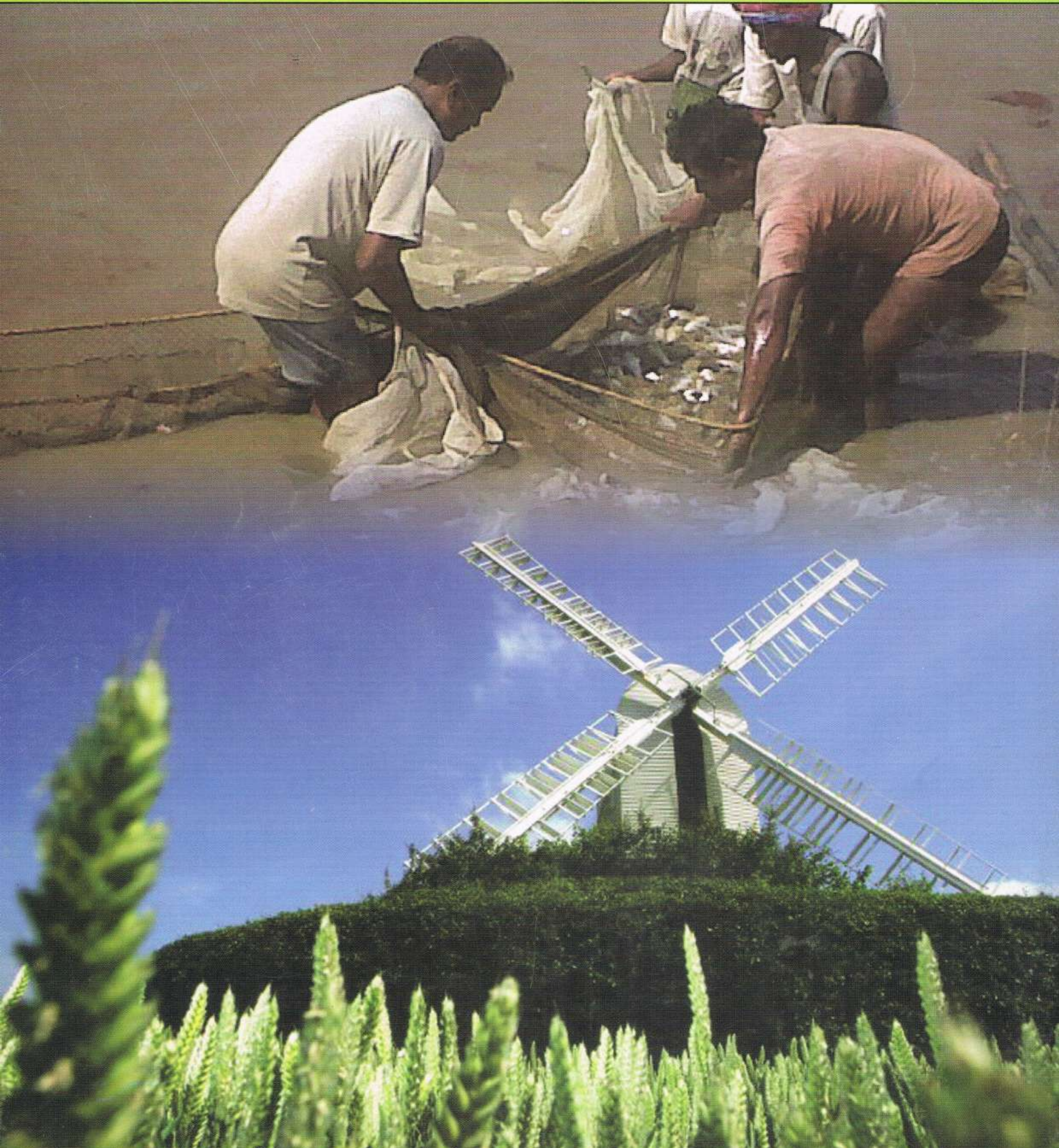

प्रकाशक और मुद्रक : के. गणेशन, महानिदेशक, प्रकाशन विभाग, सूचना भवन, सीजीओ कॉम्प्लेक्स, लोधी रोड, नई दिल्ली–110003.
मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स प्रा. लि., डब्ल्यू-30 ओखला इंडस्ट्रियल एरिया-II, नई दिल्ली-110 020 : वरिष्ठ संपादक : कैलाश चन्द मीना